चन्दामामा
जुलाई १९८६

एक मधुमक्खी थी प्यारी प्यारी
उड़ती फिरती क्यारी-क्यारी॥

छूटता कागज जो वो चिपकाती।
हाल बुरा था–फूटकर वो रो जाती॥

रो रो कर खोने वाली थी होश।
कि दूर से उसने देखे उल्लू खरगोश॥

पढ़ा जब ऊपर नाम फ़ेविगम
खुशी से झूमी मधुमक्खी एकदम

नाचने लगी देखकर उनका गुलाबी रंग
जरूर होगी बढ़िया खुशबू इस रंग के संग

बस। बोतल खोलने की थी देरी
आ गई उससे खुशबू स्ट्रॉबेरी

अब कागज चिपकाने का काम हुआ झटपट
फ़ेविगम से दूर हुए मधुमक्खी के झंझट

फ़ेविगम से मधुमक्खी जैसा मजा पाना
जल्दी से आज ही फ़ेविगम ले आना

गुलाबी रंग,
स्ट्रॉबेरी की सुगंध,
पंछी और प्राणियों के
आकार की आकर्षक बोतलों
में और प्रचलित ट्यूब में
उपलब्ध.

फेविकोल ब्राण्ड एडहेसिव्स के निर्माता
की ओर से

OBM-7369 HN
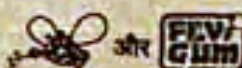
और FEVI GUM दोनों पिडिलाइट इण्डस्ट्रीज प्रा.लि. बम्बई ४०० ०२१ के ट्रेडमार्क हैं. बोतलों की डिजाइन रजिस्ट्रेशन हो गई है.

रेनू की सखियों से कट्टी
इसे पढ़ा देतीं वो पट्टी
अब इसने भी सोच लिया है
उनकी ये कर देगी छुट्टी
अपने एको पेन के सेट से
घंटों रंगती फूल औ' तितली
राजा, रानी, गुड्डा, गुड़िया
भूल के सब कुछ अगली पिछली
एको हरे और एको पीले
लाल और ऑरेंज, भूरे, नीले
काले, बैंगनी, वायलेट, गुलाबी
अब तो स्केच पेन एको ही लें.
मुफ़्त!
कलरिंग
फ़ोल्डर
EKCO
एको
स्केच पेन रंगों से यारी, मौज-मस्ती तुम्हारी!
प्रीसिज़न राइटिंग पॉइन्ट्स प्रा. लि. १८, सुभाष रोड, विले पारले (पूर्व), बम्बई-४०० ०५७.
फोन : ६०४०३०५, ६०४३५५६

अब
राजा पॉकेट बुक्स
आपके मनोरंजन के लिए पेश करती है,
राज कॉमिक्स
में
विनाशदूत
अगर तुम पर कोई मुसीबत आये तो अपने घर की छत पर लाल बल्ब रोशन कर दो... विनाश दूत तुम्हारी मदद के लिए आ जाएगा
चार नये कामिक्स
✦ विनाश दूत और रैडस्टार
✦ काठ के उल्लू
✦ सुस्त राम बने चुस्तराम
✦ गगन और मौत का तमाशा
प्रकाशक : राजा पॉकेट बुक्स 17/36 शक्ति नगर, दिल्ली-110007

चन्दामामा

संस्थापकः चक्रपाणि संचालकः नागिरेड्डी

मनुष्य सामाजिक प्राणी है, इसलिए उसके जीवन और व्यवहार का प्रभाव दूसरों पर भी पड़ता है। वह अपने श्रेष्ठ व्यवहार से अपने साथी के व्यवहार में भी परिवर्तन ला सकता है। "अनोखा उपाय" कहानी में इस सत्य का निदर्शन बड़े सुन्दर ढंग से हुआ है।

अमर वाणी

धनानि जीवितं चैव परार्थे प्राज्ञ उत्सृजेत ।
सन्निमित्ते वरं त्यागो, विनाशे नियते सति ॥

[ज्ञानी व्यक्ति परोपकार के लिए धन और जीवन दोनों का त्याग करता है। वह जानता है कि इन दोनों का विनाश निश्चित है, इसलिए सत्कारण के लिए किये गये त्याग को श्रेष्ठ मानता है।]

वर्षः ३८ जूलाई १९८६ अंकः २२

एक प्रतिः २.५० वार्षिक चन्दाः ३०.००

'चन्दामामा' के संवाद

फ्लोरिडा में ताजमहल

डोनाल्ड सोलि्डनी नाम का एक अमरीकी फ्लोरिडा में ताजमहल जैसे एक कलात्मक महल के निर्माण के बारे में विचार कर रहा है। हमारे देश के ताजमहल को अमरीका के कुछ ही लोग देख सकते हैं। पर यही महल अगर अमरीका में हो तो लाखों लोगों को उसे देखने का मौक़ा मिल सकता है। इसी विचार से प्रेरित होकर डोनाल्ड ने इस इमारत के निर्माण का निश्चय किया है।

पिरामिडों के युग की वायु

क़रीब ४,६०० वर्ष पूर्व चियोटल्स पिरामिड का निर्माण हुआ था। इस समय कुछ वैज्ञानिक इसकी तह में केंद्रित वायु को बोतलों में भरकर उसकी जाँच करने में लगे हैं। वे अपनी इस शोध में पृथ्वी के अन्दर की जलवायु का पता तो लगायेंगे ही, साथ ही इस बात की जानकारी हासिल करने की कोशिश भी करेंगे कि प्राचीन मिस्र के निवासी मूल्यवान वस्तुओं को बहुत काल तक कैसे सुरक्षित रखा करते थे।
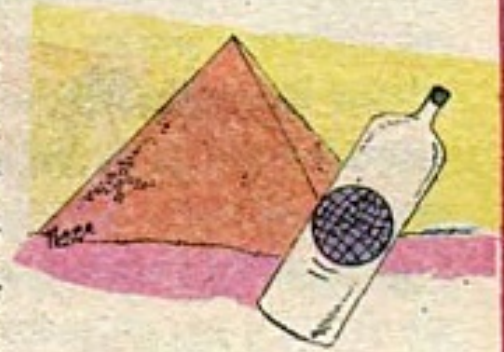
केवल महिलाएँ

साउद अरब में एक ऐसा कारखाना बनाया जा रहा है, जिसमें केवल महिलाएँ ही काम करेंगी। इस देश में यह प्रतिबंध है कि स्त्री-पुरुष साथ-साथ एक स्थान पर काम नहीं कर सकते।

क्या आप जानते हैं ?

१. विश्व का सबसे अधिक प्राचीन राजधानी बना नगर कौन-सा है ?
२. मास्को से पहले रूस की राजधानी कहाँ थी ?
३. नार्वे की राजधानी ओस्लो नगरी का पूर्व नाम क्या था ?
४. कानबेरी के पूर्व आस्ट्रेलिया की राजधानी कहाँ थी ?
५. मिस्र की राजधानी कैरो नगर का दूसरा नाम क्या है ?

उत्तर पृष्ठ ६४ पर देखें

कार्तवीर्यार्जुन

माहिष्मती नगर नर्मदा के तट पर बसा हुआ था। प्राचीन काल में कार्तवीर्याजुन ने इस नगरी को अपनी राजधानी बनाया था। राजा कार्तवीर्य की यह प्रबल इच्छा थी कि हर कार्य को वह अपने हाथों से संपन्न कर सके। इस शक्ति को प्राप्त करने के लिए उसने भगवान दत्तात्रेय की भक्तिपूर्वक उपासना की और वरदान के रूप में एक सहस्र हाथ प्राप्त किये। इसके बाद कार्तवीर्यार्जुन सहस्रार्जुन कहलाने लगा।

एक सहस्र हाथ प्राप्त करके कार्तवीर्य के अन्दर अहंकार आगया। एक दिन वह नदी में स्नान कर रहा था। उस समय उसके अन्दर यह विचार आया कि नदी के प्रवाह को अपने सहस्र हाथ फैलाकर रोक देना चाहिए। उसने उत्साहित होकर अपने हाथ फैलाये। परिणाम स्वरूप नदी में उफान आगया और उसने बाढ़ का रूप लेकर नदी-किनारे पड़ाव डालकर पड़ी रावण की सेना को डुबा दिया। यह देख रावण क्रुद्ध हो उठा और उसने कार्तवीर्यार्जुन के साथ युद्ध छेड़ दिया, पर वह हार गया। अपनी जीत के कारण कार्तवीर्य का अहंकार और भी बढ़ गया।

एक बार कार्तवीर्य ने अग्निदेव के अनुरोध करने पर उसे गिरिनगर के जंगल को जलाने की अनुमति दे दी। आग की लपटों में अपव मुनि का आश्रम भी जल गया। उन्होंने क्रुद्ध होकर कार्तवीर्य को शाप दिया, "तू एक सहस्र हाथ होने के कारण अहंकार में चूर होगया है। शीघ्र ही तू इन हाथों से वंचित हो जायेगा।"

कुछ दिनों बाद कार्तवीर्यार्जुन ने जमदग्नि मुनि के आश्रम से कामधेनु के अपहरण का प्रयत्न किया। जब उसे सफलता न मिली तो उसने महर्षि जमदग्नि को ही मार डाला। जब जमदग्नि के पुत्र परशुराम आश्रम को लौटे तो उन्होंने क्रुद्ध होकर कार्तवीर्य के एक सहस्र हाथों को काट डाला और फिर उसका वध किया।

विशारद का पांडित्य

चंडिकापुर में एक गृहस्थ ब्राह्मण रहता था, नाम था जगन्नाथ। तीन पुत्रियों के जन्म के बाद उसके एक पुत्र हुआ और उसका नाम विशारद रखा गया। बहुत वर्षों की प्रतीक्षा के बाद उस घर में पुत्र-जन्म हुआ था, इसलिए माँ-बाप तथा बहनों ने भी बड़े लाड़-प्यार से उसका पालन-पोषण किया। विशारद बड़ा होने लगा। उसके लक्षण अच्छे नहीं थे, वह उद्‍ण्ड और पढ़ाई में कच्चा था। जब तक वह पंद्रह वर्ष का हुआ, तब तक उसकी तीनों बहनों का विवाह हो चुका था, माँ-बाप भी वृद्ध होने लगे थे। जगन्नाथ को विशारद के भविष्य की चिन्ता सताने लगी। विशारद के अन्दर न पढ़ने की अभिरुचि थी और न किसी अन्य काम को करने की इच्छा। इकलौता पुत्र, माँ-बाप के सामने उसके भविष्य का सवाल था।

एक दिन एक बैरागी बाबा जगन्नाथ के मकान के सामने आ खड़ा हुआ और पुकारकर बोला, "मुझे भिक्षा दो और अपनी समस्या का निदान पाओ।"

बैरागी की पुकार सुनकर जगन्नाथ दौड़ा-दौड़ा बाहर आया और बोला, "बाबा, आपके मुख-मंडल का तेज आपकी प्राप्ति का सूचक है। बड़ी कृपा हो, अगर आप हमारे हाथ से भिक्षा ग्रहण कर लें।"

बैरागी ने जगन्नाथ के घर संतुष्टिपूर्वक आहार ग्रहण किया, फिर बोला, "तुमने मुझे सुमधुर पकान्न से संतुष्ट किया है। तुम मुझे अपनी समस्या बताओ, मैं उसे हल करूँगा।"

जगन्नाथ ने विशारद के बारे में सारा वृत्तान्त सुनाकर बैरागी से पूछा, "बाबा जी, हमारे जीवन का अब क्या भरोसा है? हमें अपने बेटे की चिन्ता है। हमारे बिना यह कैसे अपना जीवन बितायेगा?"

बैरागी ने विशारद को देखने की इच्छा प्रकट की। उस समय विशारद पड़ोस में दूसरे बच्चों

के साथ खेल रहा था। जगन्नाथ ने अपनी पत्नी को भेजकर विशारद को बुला लिया।

बैरागी ने विशारद को अपने निकट बुलाकर उसके दायें हाथ की रेखाओं की जाँच की और बोला, "महाशय, तुम अपने पुत्र के बारे में बिलकुल चिंता मत करो। विशारद को निश्चय ही राजाश्रय प्राप्त होगा और आप दोनों पति-पत्नी इसके वैभव को देखने के लिए जीवित रहोगे !"

"लेकिन बाबाजी, यह लड़का न तो किसी विद्या में रुचि रखता है और न किसी कला में ही कुशल है। इसे राजाश्रय प्राप्त होने की बात समझ में नहीं आती।" जगन्नाथ ने पूछा।

"तुम्हारी शंका सत्य है, पर विधि-विधान अत्यन्त प्रबल होता है। तुम केवल एक काम करो, विशारद को संस्कृत सिखा दो। यही वह भाषा है जो इसे धन-वैभव, उच्च पद प्रदान करेगी।" बैरागी ने कहा।

जगन्नाथ ने चिन्तित होकर पूछा, "बाबा, इसे तो साधारण पढ़ाई का भी ज्ञान नहीं है, फिर यह संस्कृत जैसी पांडित्यपूर्ण भाषा का अध्ययन कैसे कर सकेगा ?"

विशारद ने तत्काल अपने पिता से कहा, "पिताजी, आप बिलकुल चिन्ता न करें। मैं कष्ट उठाकर भी संस्कृत का अध्ययन करूँगा।"

"देख रहे हो न, तुम्हारे पुत्र के अन्दर अभी से संस्कृत के प्रति अभिरुचि पैदा होगयी है ! मेरी बातों पर विश्वास करो !" यह कहकर बैरागी वहाँ से चला गया।

जगन्नाथ को संस्कृत भाषा का थोड़ा-बहुत ज्ञान था, उसने अपने पुत्र को उसी दिन से संस्कृत सिखाना आरंभ कर दिया। काफ़ी दिन निकल गये, पर विशारद संस्कृत का एक अक्षर भी नहीं सीख पाया।

आख़िर जगन्नाथ हार गया। वह व्यथित होकर अपनी पत्नी से बोला, "देखो, देखो, विशारद तो संस्कृत सीख नहीं पारहा है। इस भाषा के ज्ञान के बिना इसका भविष्य उज्जवल नहीं हो सकता, बैरागी बाबा साफ़ बता गये हैं। मेरी समझ में नहीं आता कि ऐसी हालत में हमें क्या करना चाहिए ?"

"आप तो साधारण बातें भी इस तरह नहीं

कह पाते कि मेरी भी समझ में आजायें, फिर आप संस्कृत कैसे पढ़ा सकते हैं ? विद्याध्ययन के लिए एक उत्तम गुरु की आवश्यकता होती है। आप विशारद के लिए कोई अन्य शिक्षक नियुक्त कर दीजिए !" जगन्नाथ की पत्नी बोली।

जगन्नाथ को अपनी पत्नी की बातों में सच्चाई नज़र आयी। पर चंडिकापुर में तो एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं था, जो संस्कृत का शिक्षक होने की योग्यता रखता हो। पड़ोसी गाँव भरतपुर में एक माताचरण नाम का पंडित अवश्य रहता था, जो संस्कृत पढ़ाने के लिए आस पास के सारे इलाके में मशहूर था। उसके बारे में ऐसा कहा जाता था कि वह जानवरों को भी संस्कृत सिखा सकता है। जगन्नाथ ने विशारद को साथ लिया और भरतपुर पहुँच कर उसे माताचरण के हाथों में सौंप दिया।

माताचरण ने जगन्नाथ से कहा, "महाशय, भाषा सिखाना कोई साधारण काम नहीं है, वह तो एक कला है, कला। फिर संस्कृत भाषा की तो बात ही और है। पर आप निश्चिंत रहें। मैं दो वर्ष के अन्दर आपके पुत्र को अपने समकक्ष बना दूँगा। मैं इसे केवल भाषा ही नहीं, भाषा की बारीकियों का ज्ञान भी दूँगा।"

"पंडितजी, क्या मेरा पुत्र सचमुच संस्कृत सीख सकेगा ? उसका सारा भविष्य संस्कृत के ज्ञान पर आधारित है।" जगन्नाथ ने कहा।

"तुम निराश मत होओ, भाई ! मैंने यह प्रतिज्ञा की है कि अगर कोई मेरे यहाँ आकर संस्कृत भाषा सीखे बग़ैर वापस चला जायेगा तो मैं उसी दिन से संस्कृत पढ़ाना छोड़ दूँगा। मैं बीस वर्षों से शिक्षण का कार्य कर रहा हूँ, पर आज तक ऐसा एक भी विद्यार्थी नहीं आया है, जो मुझसे भाषा सीखे बिना वापस चला गया हो।" माताचरण ने कहा।

पंडित माताचरण की बातों से जगन्नाथ को बड़ा आश्वासन मिला। वह संतुष्ट होकर अपने गाँव लौट गया। माताचरण ने विशारद को संस्कृत पढ़ाना आरंभ किया और अन्त में वह इस निश्चय पर पहुँचा कि विशारद को संस्कृत सिखाना असंभव कार्य है। पर उसे अपने धंधे का डर था, वह इस सत्य को खुले रूप में स्वीकार नहीं कर सकता था कि वह एक लड़के

को संस्कृत नहीं सिखा सका ।

माताचरण ने दो वर्ष बड़ी सहनशीलता से काटे । वह विशारद को पढ़ाता रहा । अवधि पूर्ण होने पर उसने विशारद से कहा, "सुनो बेटा, अब तुम्हारी शिक्षा पूर्ण हो चुकी है । इस समय संस्कृत भाषा में तुम्हारे समकक्ष कोई विद्वान नहीं है । पर मेरी दो बातें याद रखना ! संस्कृत देवभाषा है, तुम साधारण लोगों के साथ इस भाषा में बातचीत मत करना । दूसरे, तुम सदा महान पंडितों के साथ इस भाषा का उपयोग करना । तुम्हें सफलता मिलेगी ।"

विशारद ने प्रसन्नतापूर्वक माताचरण के चरणों में प्रणाम किया, फिर विनयपूर्वक बोला, "गुरुजी, मैं आपके इस उपकार को जीवन भर नहीं भूलूँगा । आपने मेरे भविष्य का मार्ग प्रशस्त किया है । मैं अपनी इस विद्या के द्वारा जब राजाश्रय प्राप्त कर लूँगा, तब मेरे पिता जो विद्याशुल्क चुकायेंगे, उसके अलावा मैं भी अपनी तरफ़ से गुरु दक्षिणा चुकाँऊगा । कृपया, आप बतायें कि आप क्या चाहते हैं ?"

"सुनो बेटा, अगर तुमसे कोई यह पूछे कि तुम्हें किसने संस्कृत सिखायी है, तो तुम भूल से भी मेरा नाम न लेना । तुम्हारी तरफ़ से यही मेरे लिए सच्ची गुरुदक्षिणा होगी ।" माताचरण ने कुछ असमंजस से कहा ।

विशारद ने माताचरण की बात मान ली । वह चंडिकापुर अपने घर लौट आया और पिता से बोला, "पिताजी, मैंने संस्कृत भाषा पूरी तरह सीख ली है !" जगन्नाथ ने अपने पुत्र के पांडित्य की परीक्षा लेनी चाही ।

विशारद ने तत्काल कहा, "पिताजी, मेरे गुरु का आदेश है कि मैं महान विद्वानों के साथ ही संस्कृत भाषा में बातचीत करूँ, अन्य लोगों से नहीं । इसलिए मैं आपसे बात नहीं करूँगा । आप इतना करें कि मेरे लिए कोई अच्छा मुहूर्त निकाल दें । मैं देशाटन के लिए जाना चाहता हूँ। मेरा यह संकल्प है कि मैं सारे देश के संस्कृत के पंडितों को शास्त्रार्थ में पराजित करूँ ।"

अपने पुत्र की बातें सुनकर जगन्नाथ को बड़ी प्रसन्नता हुई । वह बोला, "बेटा, शायद बैरागी बाबा की वाणी सच निकल जाये, तुम निश्चय ही देशाटन पर चले जाओ !" जगन्नाथ

ने पंचांग देखकर एक अच्छा मुहूर्त निकाला और बेटे को आशीर्वाद देकर विदा किया।

राजधानी कौशलपुर के मार्ग में स्वर्णपुर नाम का एक छोटा नगर पड़ता था। विशारद स्वर्णपुर पहुँचा और एक भले गृहस्थ के घर ठहर गया। उसकी पत्नी अत्यन्त झगड़ालू स्वभाव की थी। एक राहगीर को घर में टिकाने का आरोप लगाकर वह अपने पति पर टूट पड़ी।

विशारद पास में ही उपस्थिति था, अत्यन्त शांत स्वर में बोला, "माताजी, मैं संस्कृत का एक महान विद्वान ब्राह्मण हूँ। मेरे आगमन से तो आपका घर पवित्र हो गया है। आपको प्रसन्नता होनी चाहिए।"

विशारद की बात सुनकर वह औरत और भी भड़क उठी। झल्लाकर बोली, "संस्कृत में पांडित्य प्राप्त करने से क्या कोई पवित्र हो जाता है? मैं भी तो संस्कृत की पंडित हूँ।"

उस स्त्री के पंडित होने की बात सुनकर विशारद अत्यन्त प्रसन्न हुआ, बोला, "माताजी, यह तो बड़ा अच्छा संयोग है। तो हम दोनों संस्कृत में ही बातचीत कर सकते हैं।" यह कहकर विशारद ने संस्कृत भाषा में बोलना आरंभ कर दिया।

विशारद की भाषा सुनकर उस गृहस्थ की पत्नी डर गयी। ऐसी संस्कृत भाषा उसने आज तक नहीं सुनी थी। उसके मन में सन्देह हुआ कि कहीं यह युवक कोई मांत्रिक न हो। उसने भयभीत होकर विनम्र शब्दों में कहा, "महाशय, मुझे शाप न दो! शायद मुझे अच्छा सबक़ सिखाने के लिए मेरे पति तुम्हें अपने साथ लिवा

लाये हैं। मैं भविष्य में अपने पति के आदेशों का पालन करूँगी। कृपया मुझ पर कोई जादू-टोना न कीजिए।"

विशारद ने सोचा कि उसके पांडित्य के प्रभाव से उस गृहिणी के अन्दर अद्भुत परिवर्तन आगया है। पत्नी का झगड़लूपन दूर हो गया, इस खुशी में उस गृहस्थ ने विशारद को एक सौ स्वर्णमुद्राएँ उपहार में दीं और बोला, "हमारे स्वर्णपुर में कवितानन्द नाम का संस्कृत का एक पंडित है। उसकी प्रतिज्ञा है कि जो उसे हरायेगा, उसे वह एक हज़ार स्वर्णमुद्राएँ देगा। आप उससे अवश्य भेंट कीजिए!"

दूसरे दिन सुबह के समय विशारद कवितानन्द के पास गया। उसने अपने देशाटन का वृत्तान्त सुनाया और संस्कृत में बोलने लगा। कवितानन्द को उसकी भाषा बिलकुल भी समझ में नहीं आयी। वास्तव में कवितानन्द अपने अधकचरे ज्ञान को लेकर विद्वान बना था। उसकी दशा वैसी ही थी, जैसे वनस्पतिहीन स्थान में अरंडी का पेड़ होता है।

विशारद की बातें सुनकर कवितानन्द को डर लगा कि कहीं उसकी पोल न खुल जाये। उसे पक्का विश्वास होगया कि यह युवक कोई महान पंडित है। कुछ भयभीत स्वर में वह बोला, "महाशय, आपके साथ शास्त्रार्थ करके अगर मैं हार गया तो स्वर्णपुर में मेरी प्रतिष्ठा धूल में मिल जायेगी। मैं आपको एक हज़ार स्वर्णमुद्राएँ वैसे ही दिये देता हूँ। हमारे बीच शास्त्रार्थ उचित नहीं है। हमारे देश के राजा वराहसेन संस्कृत भाषा के महान पंडित हैं। आप कौशलपुर राजधानी में जाइये और महाराज के सामने अपने पांडित्य का प्रदर्शन करके राजाश्रय प्राप्त कर लीजिए!"

विशारद ने कवितानन्द की बात मान ली और उससे एक हज़ार स्वर्णमुद्राएं लेकर सीधे राजधानी की ओर चल पड़ा। वहाँ पूछताछ करने पर उसे मालूम हुआ कि राजसभा में चतुरपाद नाम का एक संस्कृत का पांडित है। राजा के दर्शन करने के लिए पहले उससे भेंट करना आवश्यक है। विशारद ने चतुरपाद से भेंट की और कुछ ही क्षणों में उनके सामने अपना पूरा पांडित्य प्रदर्शित कर दिया।

चतुरपाद ने विशारद को डपट कर कहा, "बेटा, संस्कृत भाषा अत्यन्त मधुर होती है। यह तुम्हारे मुख से भ्रष्ट होकर निकल रही है। तुम्हारी भाषा में उच्चारण और व्याकरण की भी असंख्य त्रुटियां हैं। हमारे देश के राजा वराहसेन अगर तुम्हारी संस्कृत सुनेंगे तो वे तुम्हारी जीभ कटवा देंगे। तुम पंडित होने का विचार छोड़दो और परिश्रम करके अपना गुज़ारा करो। रास्ते के खर्च के लिए मैं तुम्हें सौ स्वर्णमुद्राएँ दे देता हूँ।"

चतुरपाद की बातों पर विशारद को विश्वास न हुआ। क्रुद्ध होकर बोला, "आपको मेरे पांडित्य पर ईर्ष्या हो रही है। आप यह सोच कर भयभीत हो रहे हैं कि राजा के दर्शन करने के बाद कहीं मुझे राजाश्रय न प्राप्त हो जाये और आपके सम्मान पर आँच न आजाये।"

चतुरपाद ने अपनी निंदा सुनी, पर ज़रा भी उत्तेजित हुए बिना शांत स्वर में बोला, "मैंने तुम्हारे हित की कामना से ये बातें कहीं, इसके विपरीत तुमने मेरा तिरस्कार किया। इधर कुछ दिनों से महाराज अस्वस्थ हैं। मैं तुम्हें उनके दर्शन तो करवा देता हूँ, इसके बाद जो कुछ होगा, वह तुम्हारे भाग्य की बात होगी।"

"राजा के दर्शन हो जाने पर मुझे निश्चय ही राजाश्रय प्राप्त होगा। ऐसा होने पर मैं अवश्य ही आपका ऋण चुकाऊँगा।" विशारद ने कहा।

"सुनो, तुम बस इतना करना कि राजा के सामने यह बात प्रकट न होने देना कि मेरे द्वारा तुम्हें राजा के दर्शन प्राप्त हुए हैं। इसी से तुम्हारा ऋण चुक जायेगा।" चतुरपाद ने कहा।

उसी दिन विशारद को महाराज वराहसेन के दर्शन प्राप्त हुए। राजा ने अल्पवयस्क इस युवक को देखकर पूछा, "तुम कौन हो और किसलिए आये हो?"

"मेरा नाम विशारद है। मैं संस्कृत का पंडित हूँ। मैं अपने महान पांडित्य के बल पर राजाश्रय प्राप्त कर सकूँ, इसी कामना से आपके पास आया हूँ।" विशारद ने उत्तर दिया।

उस समय राजा अत्यन्त चिन्तित एवं थके मांदे दीख रहे थे। कुछ क्लान्त स्वर में उन्होंने विशारद से पूछा, "तुम बालक जैसे दिखाई देते हो। इस छोटी-सी उम्र में तुम्हें संस्कृत में महान

पांडित्य कैसे प्राप्त हुआ ?"

"एक गरु ने मुझे दो वर्षों में प्रकाण्ड पंडित बनाया है ।" यह कहकर विशारद राजा से संस्कृत में वार्तालाप करने लगा ।

विशारद की भाषा सुनकर राजा वराहसेन खिलखिलाकर हँस पड़े । उन्होंने अत्यन्त प्रयास पूर्वक अपनी हँसी पर नियंत्रण किया और पूछा, "बताओ, किस गुरु के यहाँ तुमने शिक्षा पायी है ?"

"मेरे गुरुदेव ने कहा था कि उनका नाम गुप्त रखना ही उनके प्रति सच्ची गुरुदक्षिणा होगी, अतः मैं उनका नाम प्रकट नहीं कर सकता ।" विशारद ने गंभीर स्वर में कहा ।

राजा यह जवाब सुनकर पुनः हँस पड़े । इसके बाद उन्होंने विशारद से सारा वृत्तान्त सुना और उस रात उसे अपने महल में ही सोने का आदेश दिया ।

दूसरे दिन राजवैद्य अपने नियत समय पर आया । उसने राजा की जाँच की तो अत्यन्त खुश होकर बोला, "महाराज, एक रात के अन्दर आपके स्वास्थ्य में इतना बड़ा परिवर्तन देखकर मैं बहुत ही प्रसन्न हूँ । निश्चय ही आप पर दवाइयों का अच्छा असर हो रहा है ।"

"जब मनुष्य का मन निर्मल होता है, तभी दवाइयां काम करती हैं । मेरा मन अनेक समस्याओं से आक्रान्त था, ऐसी स्थिति में विशारद की संस्कृत भाषा सुनकर मेरा अच्छा मनोरंजन हुआ । कुछ देर के लिए मैं अपनी सारी समस्याओं को भूल गया और मुझे अच्छी नींद आयी ।" राजा वराहसेन ने कहा ।

राजा वराहसेन ने स्वस्थ होकर विशारद को राजाश्रय प्रदान किया । अपनी संस्कृत भाषा के द्वारा सभासदों का मनोरंजन करना विशारद की नित्य की दिनचर्या थी ।

इसप्रकार राज सभा में आश्रय पाने के बाद विशारद ने अपने माता-पिता को भी राजधानी कौशलपुर में बुलवा लिया । अपने पुत्र की इस उन्नति पर प्रसन्न होकर जगन्नाथ मन ही मन कहने लगा, "चाहे जैसे भी सही, बैरागी बाबा की भविष्यवाणी सत्य प्रमाणित हुई ।"

२

[धवलगिरि का राजकुमार चित्रसेन शिकार खेलते हुए भटक गया। तब एक पहाड़ी गुफ़ा में उसने एक सिद्ध को देखा। सिद्ध ने उसे बाँस की तीलियों की बनी एक टोकरी दी। राजकुमार टोकरी लेकर चल पड़ा और उसने एक निर्जन स्थान में उसे खोला तो एक विशाल महल उसके सामने प्रकट हो गया। तभी उग्राक्ष नाम का एक राक्षस वहाँ आया और उसने चित्रसेन को इस शर्त पर छोड़ दिया कि वह अपने ज्येष्ठ पुत्र को अठारह वर्ष की आयु होने पर राक्षस को सौंप देगा। आगे पढ़िये...]

उग्राक्ष जंगल के घने वृक्षों के बीच ओझल होगया। चित्रसेन ने फिलहाल इस बला को टली जान गहरी साँस ली। उसके प्राण बच गये थे। अब उसके सामने यह सवाल था कि वह इस जंगल से निकलकर किसी तरह धवलगिरि नगर पहुँच जाये।

इसी विषय पर विचार करता हुआ चित्रसेन उठ खड़ा हुआ और उसने पश्चिम दिशा में दृष्टि डाली। सूर्यास्त होने में अब थोड़ा ही समय बच रहा था। उसकी आँखों के सामने गगनचुम्बी एक विशाल भवन खड़ा था जिसकी बुर्जी पर सूर्य की किरणें पड़ रही थीं। पूरा भवन अस्त होते सूर्य की लालिमा में एक दम चमाचम दमक रहा था।

"अहा! कैसा सुन्दर भवन है! कहीं इसके अन्दर जंगली जानवर, उल्लू और चमगादड़ तो वास नहीं कर रहे हैं?" चित्रसेन ने अपनी दृष्टि दूसरी ओर घुमा ली और इस निर्जन में इस

भवन की अकारथता पर सोच करता हुआ दूसरी दिशा में चल पड़ा ।

अभी चित्रसेन ने कुछ ही क़दम आगे बढ़ाये होंगे कि उसे हठात् पीछे से यह पुकार सुनाई दी, "महाराज !" ..."यहाँ महाराज कौन है ? इस जंगल में यह मानव-स्वर कैसा ?" चित्रसेन सोच में पड़ गया और उसने विस्मय भाव से पीछे मुड़कर देखा । उसे क़ीमती वस्त्र धारण किये तीन व्यक्ति और उनके पीछे कुछ सैनिक दिखाई दिये । इस विचित्र दृश्य को देख चित्रसेन कुछ कहने को हुआ, पर आगे खड़े उन तीन व्यक्तियों में से एक व्यक्ति आगे आया और चित्रसेन के सामने अदब से झुककर बोला, "महाराज, आप देर तक राजभवन न लौटे, तो हम जंगल में आप को खोजने के लिए गये । बड़ी प्रसन्नता की बात है कि यहाँ आपसे भेंट हो गयी ।"

"मैं महाराजा हूँ ?" आश्चर्यचकित हो चित्रसेन ने पूछा ।

चित्रसेन का यह सवाल सुनकर उसे महाराजा सम्बोधित करनेवाला व्यक्ति झट पीछे मुड़ा और दूसरे व्यक्ति से व्यग्रतापूर्वक बोला, "सेनापति, मालूम होता है, महाराज काफ़ी थक गये हैं । कहार कहाँ हैं ? उनसे तुरन्त पालकी लाने को कहो !"

"मंत्रिवर, वे वृक्षों की ओट में खड़े आपके आदेश की प्रतीक्षा कर रहे हैं । मैं उनहें अभी बुलाता हूँ ।" यह कहकर सेनापति वहाँ से निकलकर कुछ दूर गया, फिर ज़ोर से ताली बजायीं । इस संकेत के उत्तर में ये शब्द सुनाई दिये, "हुज़ूर, हम आरहे हैं ।"

फिर चार बलिष्ठ कहार पालकी लिये वहाँ आ पहुँचे, जहाँ मंत्री आदि से घिरा चित्रसेन खड़ा हुआ था ।

सेनापति ने आदरपूर्वक जिसे 'मंत्रिवर' कहकर पुकारा था, वह व्यक्ति श्रद्धापूर्वक चित्रसेन के निकट गया और झुक कर बोला, "महाराज, मैंने पालकी मँगवायी है । आप इस पर सवार हो जाइये । कहार लोग आपको इसी समय इतनी सावधानी से महल के शयन कक्ष में पहुँचायेंगे कि आपको किसी प्रकार का कष्ट न होगा ।"

मंत्री की बातें सुनने पर चित्रसेन को सचमुच ही अपने श्रम की याद आगयी और अचानक उसे इतनी थकान महसूस हुई कि वह एक भी क़दम आगे रखने की स्थिति में नहीं रह गया। वह चुपचाप पालकी पर चढ़ गया। मंत्री ने कहारों को निर्देश दिया, "ठीक है, अब तुम लोग जाओ!"

इस बीच एक और व्यक्ति से कहा, "कोशाध्यक्ष जी, इस वक्त महाराज को पूर्ण विश्राम की आवश्यकता है। इस समय उनसे कुछ न कहा जाये। इस विषय में सुविधानुसार उन से चर्चा की जायेगी।"

पालकी में आसीन चित्रसेन मन ही मन सोचने लगा, "ओह, मेरे लिए राजमहल ही नहीं, बल्कि मंत्री, सेनापति और कोशाध्यक्ष भी हैं।"

थोड़ी ही देर में कहारों ने चित्रसेन को महल के ऊपरी मंजिल के एक विशाल कक्ष में उतार दिया।

चित्रसेन ने देखा, कक्ष में हंसतूलिका तल्प, मुलायम गद्दे व फ़र्श पर बहुमूल्य कालीन बिछी है। चित्रसेन जितना ही देखता, उसे यह आश्चर्य और सन्देह होता कि कहीं यह स्वप्न तो नहीं है। उसे इस बात का स्मरण हो आया कि वह किस प्रकार विपदाओं से बचता हुआ यहाँ पर आ पहुँचा। वह एक दम निराश हो चुका था कि उस निर्जन प्रदेश में संघर्ष करता हुआ वह क्या अधिक समय तक जीवित रह सकता है! ऐसी स्थिति में वह न केवल सुरक्षित बच निकला है, बलिक उस का भाग्य भी प्रबल होता दिख रहा है। आख़िर इस का क्या कारण है! इन्ही विचारों में वह डूबा हुआ था।

अन्त में उसे सिद्ध की महिमा पर पूरा विश्वास होगया। उसने समझ लिया कि जो महान सिद्ध एक छोटी-सी बाँस की टोकरी में इतना विशाल भवन छिपा रख सकता है, वह निश्चय ही उसके लिए मंत्री, सेनापति, कोशाध्यक्ष तथा अनेक सेवकों का प्रबन्ध भी कर सकता है। यह उसके लिए कोई बड़ी बात नहीं है।

चित्रसेन अपना उपकार करनेवाले सिद्ध के बारे में सोच ही रहा था कि तभी उसके सामने मिष्ठान्नों से भरा भोजन परोसा गया।

दोपहर से ही भूख सता रही थी, इसलिए

उसने संतुष्टि के साथ भरपेट भोजन किया। इसके बाद आरामदेह पर्यंक पर लेटकर वह भविष्य के कार्यक्रम के बारे में विचार करने लगा।

विचारों में खोया वह कब सोगया, उसे नहीं मालूम। जब उसकी नींद खुली तो वह देखता क्या है, खिड़कियों से सूर्य की कोमल किरणें कक्ष के अन्दर आ रही हैं। इस अपूर्व महल में बितायी गयी उसकी यह पहली रात अत्यन्त आनन्दपूर्वक बीती थी। वह उठा और उसने प्रातः काल का कृत्य समाप्त किया। वह कक्ष से बाहर आ ही रहा था कि द्वार पर मंत्री से भेंट होगयी।

मंत्री ने चित्रसेन को अभिवादन कर पूछा, "महाराज, मैं समझता हूँ कि आपने रात्रि में सुखशयन किया है। यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं राज्य से सम्बन्धित कुछ मुख्य बातें आपसे निवेदन करना चाहता हूँ।"

वास्तव में चित्रसेन को राज्य तथा शासन से सम्बन्धित समस्याओं के बारे में थोड़ी भी जानकारी नहीं थी। अभी धवलगिरि पर उसके पिता का शासन था। उसका बड़ा भाई शूरसेन युवराज था। चित्रसेन छोटा होने के कारण अत्यन्त लाड़-प्यार से पला था और राज्य की किसी भी जिम्मेदारी से मुक्त था।

उसने शासन-सम्बन्धी किसी भी कार्य में कभी कोई रुचि नहीं ली थी। जब मंत्री ने उससे शासन-सम्बन्धी चर्चा करनी चाही तो उसे अकस्मात् अपने माता-पिता का स्मरण हो आया। वह सोचने लगा, अगर भाई शूरसेन सकुशल

राज्य में पहुँच गये होंगे तो उसके माता-पिता अब उसके बारे में बहुत ही चिन्तित हो रहे होंगे और उसकी कुशल-क्षेम के लिए यत्न कर रहे होंगे। इसलिए सबसे पहले उसने धवलगिरि को अपना कुशल-समाचार भेजना चाहा।

चित्रसेन ने मंत्री से कहा, "मंत्रिवर, धवलगिरि राज्य के बारे में तो आपको पूरी जानकारी होगी ही। आप तत्काल महाराजा तारकेश्वर के पास मेरी कुशल-सूचना भिजवाने की व्यवस्था कीजिये। अन्य बातों पर हम सुविधानुसार चर्चा करेंगे। देखिये, थोड़ा भी विलम्ब न होने पाये।"

"जो आज्ञा महाराज! मैं अभी सूचना भिजवाये देता हूँ। इस वक्त ख़ज़ाने में जो धन, आभूषण तथा अन्य मूल्यवान वस्तुएँ हैं, कोशाध्यक्ष ने उनकी पूरी सूची बना रखी है। क्या मैं अभी कोशाध्यक्ष को यह आदेश भेज दूँ कि वह सूची लेकर आपकी सेवा में उपस्थित हो जाये?"

"कोशाध्यक्ष को यहाँ आने की आवश्यकता नहीं है। आप मात्र सूची यहाँ पर भिजवा दीजिए! इस से मुझे पूरी जानकारी मिल जाएगी। इसके बाद आवश्यकता पड़ने पत मैं उन को यहाँ पर बुलवा लूँगा।" चित्रसेन ने कहा।

कुछ देर बाद सेवकों ने एक विस्तृत सूची चित्रसेन के हाथों में सौंप दी। ख़ज़ाने के धन की सूची और रत्न, हीरे तथा मणि-माणक्य का पूरा विवरण पढ़कर चित्रसेन किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया। इतना धन तो उसके पिता के कोशागार में भी नहीं था। उसके मन में इस बात का अहं
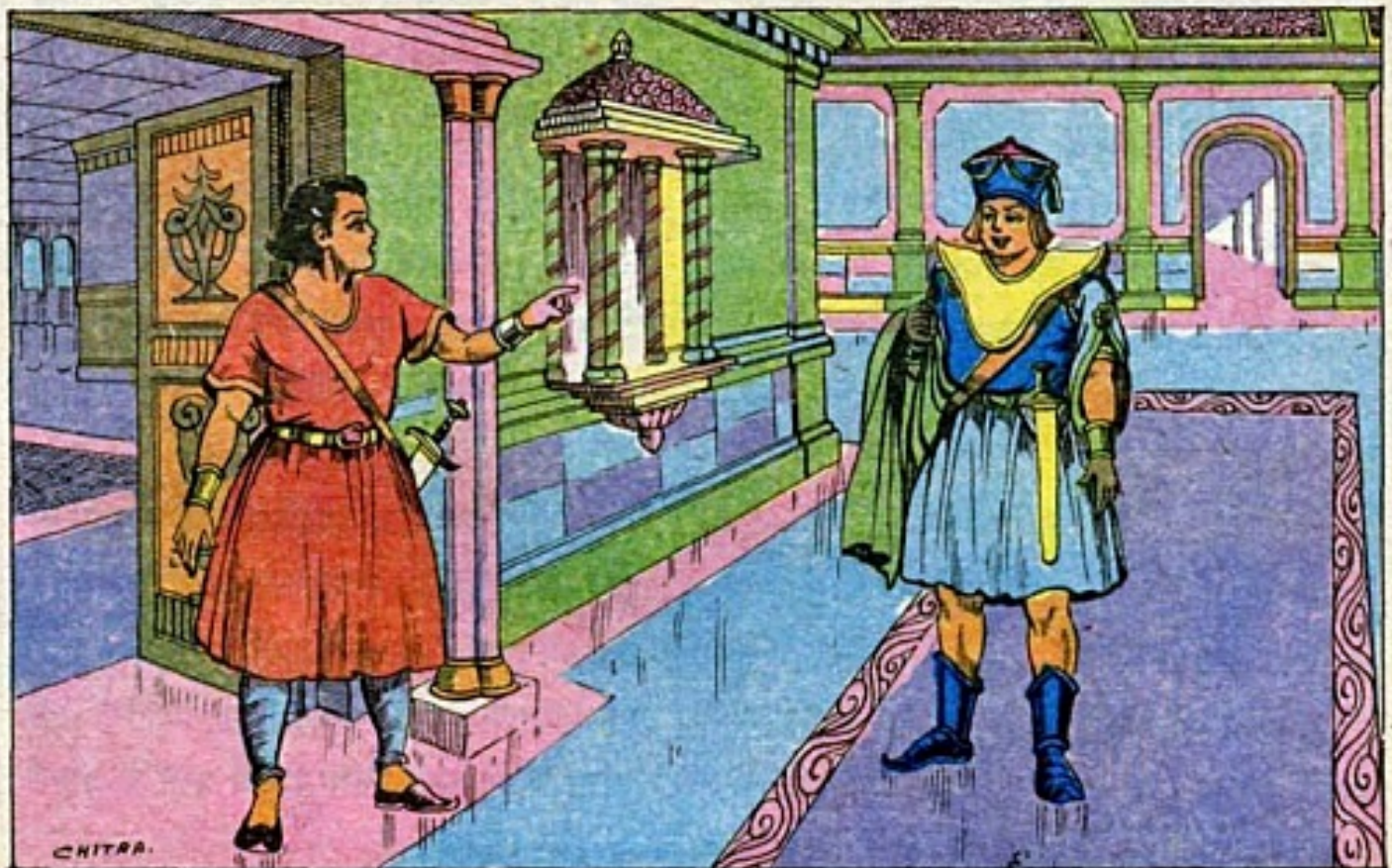
जाग उठा कि वह सहसा किसी प्रकार के श्रम व यत्न के इतने विशाल एवं सम्पन्न देश का स्वामी बन बैठा है !

उस शाम चित्रसेन कोशाध्यक्ष के साथ खज़ाने के धन एवं अमूल्य आभूषणों का निरीक्षण कर रहा था कि तभी दूत ने आकर सूचना दी कि महाराज तारकेश्वर पूरे परिवार के साथ आ पहुँचे हैं। और वे उनसे मिलने को आतुर हैं ।

यह समाचार मिलते ही चित्रसेन निरीक्षण का कार्य छोड़ कर महल के आगे उनके स्वागत के लिए आया ।

महाराज तारकेश्वर अपने पुत्र को सकुशल सामने खड़ा देख आनन्द-विह्वल हो उठे । उन्होंने आगे बढ़कर चित्रसेन को गले लगा लिया । फिर कहा, "बेटा, शूरसेन ने मुझे जब सारा हाल सुनाया तो मैं तुम्हारे जीवन के बारे में निराश हो गया था और सोच रहा था कि तुम किसी वन्य पशु का आहार बन गये हो । पर तुम्हें एकदम विपरीत स्थिति में देख मैं असीम आनन्द का अनुभव कर रहा हूँ । यहाँ के राजकर्मचारियों ने मुझे बताया कि तुम यहाँ के राजा हो । क्या यह बात सही है ? यह अद्भुत महल क्या तुम्हारा ही है ? मुझे शीघ्र बता दो, यह सब कैसे हुआ ? क्या मैं सपना तो नहीं देख रहा हूँ ?"

चित्रसेन ने स्वीकृति में अपना सिर हिला दिया ।

राजा तारकेश्वर ने फिर पूछा, "यह महान पद तुम्हें इतनी सरलता से कैसे प्राप्त होगया ? तुमसे पहले यहाँ का राजा कौन था ? इस समय वह कहाँ है ?"

"ये सभी रहस्य मैं आपको एकान्त में सुनाऊँगा । राजकर्मचारियों को ये बातें मालूम नहीं होनी चाहिए । इसके पीछे एक बहुत बड़ा रहस्य है, पिताजी ।" चित्रसेन ने गुप्त रूप में कहा ।

उस रात महाराजा तारकेश्वर के सम्मान में दावतों और मनोरंजन के कार्यक्रमों का भारी आयोजन हुआ । उन कार्यक्रमों में राजकर्मचारी, अधिकारीगण तथा आदिवासी जातियों के सरदारों ने भी भाग लिया । जब प्रजा के लोगों

को यह बात विदित हुई कि उनके राजा चित्रसेन धवलगिरि के राजा तारकेश्वर के पुत्र हैं, तो उनके आश्चर्य की कोई सीमा न रही और उन्होंने अपार हर्ष मनाया।

दावत व मनोरंजन का कार्यक्रम समाप्त होते ही चित्रसेन ने एकांत में अपने पिता को सारा वृत्तान्त सुनाया।

सिंहों को देख उसका घोड़ा किस तरह भड़क कर जंगल में भाग गया था, सिद्ध से हुई भेंट और राक्षस उग्राक्ष को दिया गया वचन इत्यादि का चित्रसेन ने हर घटना का सविस्तार वर्णन किया।

"बेटा, और तो सब ठीक है, लेकिन तुमने राक्षस को जो वचन दिया, उसका पालन कैसे करोगे? एक क्षत्रिय, वह भी राजा, उसके द्वारा अपनी प्रथम संतान को इस प्रकार एक राक्षस के हाथ सौंप देना मेरे ख्याल से धर्मसम्मत कार्य नहीं है।" तारकेश्वर ने कुछ चिंता प्रकट करते हुए कहा।

"पिताजी, अभी तो मेरा विवाह भी नहीं हुआ है। यह समस्या तो तभी पैदा होगी, जब विवाह संपन्न होने के उपरान्त मेरी प्रथम संतान पुत्र होगी और वह भी तब, जब वह जिंदा रहकर अठारह वर्ष का हो जायेगा। उस वक्त किसी मंत्र-तंत्र के बल से इस ख़तरे से बचा भी जा सकता है। मेरे विचार से अभी से चिंता करना अनावश्यक है समय बड़ा शक्ति शाली होता है। न मालूम कालगर्भ में क्या छिपा हुआ है। तब तक वह रक्षस जिन्दा होगा यह भी कहा नही जा सकता है न?" चित्रसेन ने लापरवाही दिखाते हुए कहा।

तारकेश्वर को इस चिन्ता के प्रसंग में अपने बेटे का रुख अच्छा प्रतीत नहीं हुआ। उग्राक्ष का संहार करना या अपनी बात को पलट देना इतना आसान काम नहीं था। फिर भी वे चुप रहे और पुत्र से दूसरी बात करने लगे। अंत में उन्होंने कहा, "सुनो बेटा, तुम्हारा राज्य धवलगिरि राज्य की सीमा पर है। अगर कभी तुम्हें मेरी आवश्यकता पड़े तो मुझे इसकी सूचना देना।"

(क्रमशः)
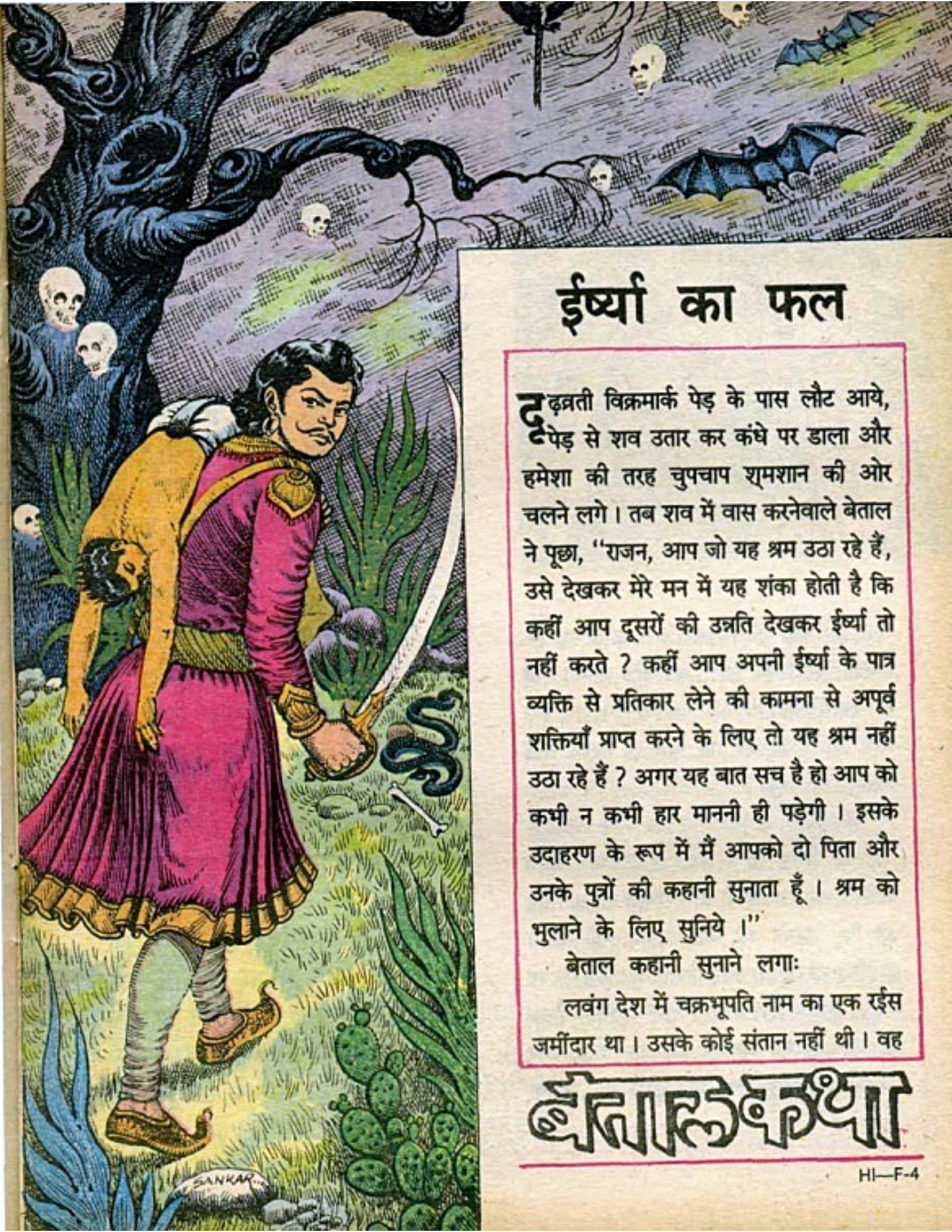
ईर्ष्या का फल

दृढ़व्रती विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आये, पेड़ से शव उतार कर कंधे पर डाला और हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगे। तब शव में वास करनेवाले बेताल ने पूछा, "राजन, आप जो यह श्रम उठा रहे हैं, उसे देखकर मेरे मन में यह शंका होती है कि कहीं आप दूसरों की उन्नति देखकर ईर्ष्या तो नहीं करते ? कहीं आप अपनी ईर्ष्या के पात्र व्यक्ति से प्रतिकार लेने की कामना से अपूर्व शक्तियाँ प्राप्त करने के लिए तो यह श्रम नहीं उठा रहे हैं ? अगर यह बात सच है हो आप को कभी न कभी हार माननी ही पड़ेगी। इसके उदाहरण के रूप में मैं आपको दो पिता और उनके पुत्रों की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये।"

बेताल कहानी सुनाने लगाः

लवंग देश में चक्रभूपति नाम का एक रईस जमींदार था। उसके कोई संतान नहीं थी। वह

बेतालकथा

सदा इस बात की चिन्ता किया करता था कि उसकी इस अपार संपत्ति का कोई वारिस नहीं है। सन्तति के लिए उसने अनेक जप, तप, व्रत तथा तीर्थयात्राएं कीं, पर फिर भी उसके कोई संतान नहीं हुई।

चक्रभूपति के यहाँ गोपाल नाम का एक पुश्तैनी नौकर था। वह भी लगभग अपने मालिक की उम्र का ही था। संयोग की बात यह थी कि, उसके भी कोई संतान नहीं थी। इसलिए चक्रभूपति और गोपाल में दोस्ती का सा रिश्ता क़ायम होगया था। दोनों मालिक-नौकर के भेदभाव को भूलकर व्यवहार करते और अपने सुख-दुख सदा एक-दूसरे को सुनाया करते थे।

इस तरह कई वर्ष बीत गये। एक बार चक्रभूपति की जमींदारी विष्णुपुर में एक महात्मा का आगमन हुआ। लोग अपनी-अपनी समस्याएँ लेकर उनके निराकरण का उपाय जानने के लिए महात्मा के दर्शनों को आने लगे। साधु-महात्मा सबका समाधान करते और उन्हें निदान के रूप में हलके उपाय भी बता देते थे।

कई दिन निकल गये। पूरे विष्णुपुर में महात्मा की चर्चा होने लगी। चक्रभूपति के मन में भी महात्मा का विश्वास घर कर गया। वह समझ गया कि महात्मा सात्विक वृत्ति के पुरुष हैं और ऋद्धि-सिद्धियों के स्वामी हैं।

एक दिन चक्रभूपति भी अपनी पत्नी को लेकर महात्मा के दर्शनों को गया।

महात्मा ने चक्रभूपति की पत्नी सुशीला की हस्तरेखाओं का गहराई से अध्ययन किया और प्रसन्नमुख हो उसे आशीर्वाद दिया। इसके बाद उन्होंने उसके हाथ में एक ताबीज देकर कहा, "बेटी, तुम चिन्ता न करो! इस ताबीज को तुम अपने गले में पहन लेना, तुम्हें अवश्य संतान की प्राप्ति होगी!"

महात्मा का आशीर्वचन लेकर चक्रभूपति और सुशीला प्रसन्न हो घर लौट आये।

दूसरे दिन चक्रभूपति को समाचार मिला कि गोपाल ने भी अपनी पत्नी के साथ महात्मा के दर्शन किये और उसकी पत्नी सीता को भी महात्मा ने ताबीज देकर सन्तान होने का

आशीर्वाद दिया ।

कुछ माह बाद सुशीला और सीता ने गर्भ-धारण किया । ठीक समय पर दोनों ने पुत्रों को जन्म दिया । जमींदार चक्रभूपति और गोपाल की खुशी का ठिकाना न रहा । जमींदार ने खूब उत्सव मनाया और गोपाल ने भी यथाशक्ति दान-पुण्य किया । चक्रभूपति ने अपने पुत्र का नाम कमल भूपति रखा । गोपाल ने अपने पुत्र को चंद्र नाम दिया ।

कमल और चंद्र लाड़-प्यार में पलकर बड़े होने लगे । इसके बाद चक्रभूपति और गोपाल के कोई संतान न हुई । इसलिए अपनी इकलौती सन्तानों के प्रति उनका प्रेम दिन दूना रात चौगुना बढ़ता गया ।

अपार संपत्ति और सुख-वैभव के बीच कमल दिन पर दिन अधिक हठी और चंचल होता गया, जबकि चंद्र गरीबी के स्वाभाविक संयम, सुख-दुख और जिम्मेदारियों के वातावरण में अत्यन्त नम्र, गंभीर और परिश्रमी बालक के रूप में बढ़ने लगा ।

उन दो बालकों के बीच एक विशेष अन्तर आ गया था । उन बालकों की उम्र दस-बारह वर्ष की होने तक जमींदार उसे पहचान न पाया ।

कमल पढ़ने के लिए पाठशाला में नहीं जाता था । घर पर भी वह कुछ लिखता-पढ़ता नहीं था । परिणाम स्वरूप वह पढ़ाई में अत्यन्त पीछे रह गया ।

चक्रभूपति को यह बात समझने में अधिक
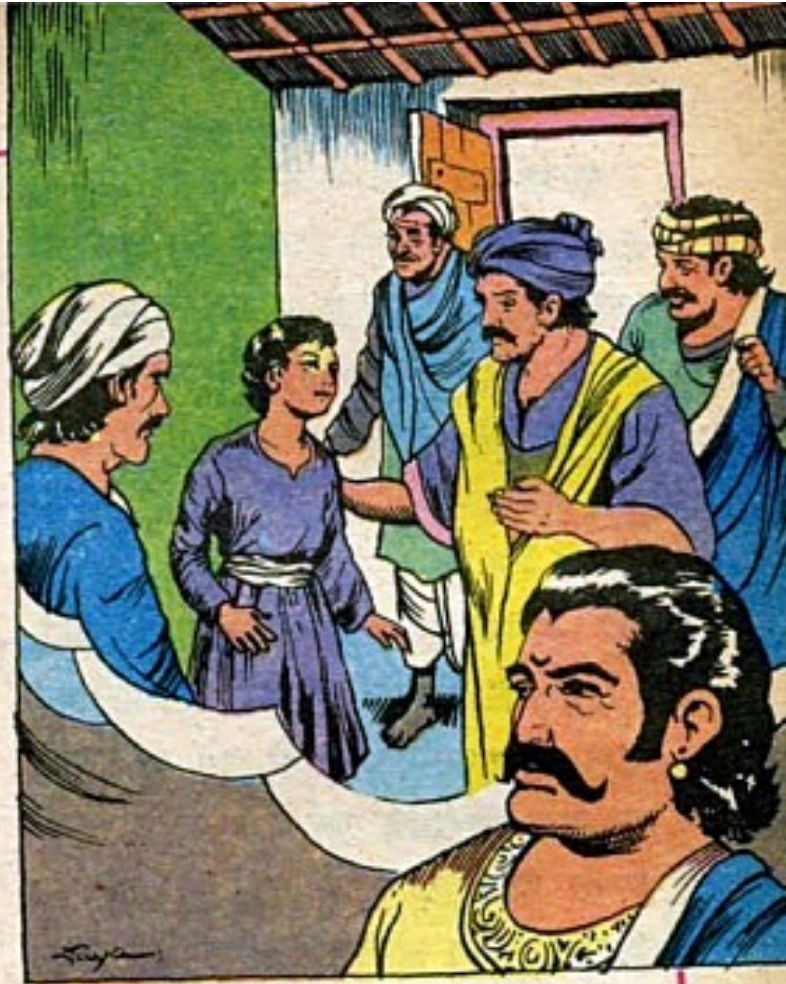
समय न लगा कि उसका लड़का पढ़ाई में कच्चा है । वह यह भी समझ गया कि कोई भी उसके सामने यह बात प्रकट करने का साहस इसलिए नहीं करता क्योंकि सभी उसकी जमींदारी में नौकरी की हैसियत से रहते हैं । उधर चंद्र अपनी पढ़ाई में बहुत अच्छा निकला । गोपाल के पुत्र की उन्नति देखकर जमींदार के मन में ईर्ष्या घर कर गयी । साथ ही वह अपने पुत्र को लेकर व्यथित रहने लगा ।

चक्रभूपति ने अपने पुत्र में सुधार लाने का हर संभव प्रयत्न किया, लेकिन वह अपने इकलौते पुत्र को डांट-डपट न सका । फल स्वरूप धीरे-धीरे वह मानसिक वेदना का शिकार होगया ।

बालक चंद्र सभी बच्चों में विशेष मेधावी था। विष्णुपुर के सभी शिक्षक उसकी प्रशंसा करते। चंद्र को पढ़ाई से अत्यन्त लगाव था। जब वह और बड़ा हुआ तो उसके मन में काशी के किसी बड़े विद्यालय में अध्ययन करने की इच्छा जागृत हुई।

एक दिन यह बात चंद्र ने अपने पिता से कही। गोपाल ने उसे समझाकर कहा, "बेटा, हो सकता है कि काशी में तुम्हें खाने-पीने एवं ठहरने का साधन उपलब्ध हो जाये, मगर यात्रा तथा अन्य आवश्यक खर्च के लिए तो धन की ज़रूरत पड़ेगी न ? मैं कहाँ से यह धन जुटाऊँगा ? तुम जानते हो, यह तो मेरी ताक़त से बाहर है।"

अपने पिता की आर्थिक स्थिति से परिचित चंद्र मन मसोस कर रह गया।

दो दिन बाद चंद्र की पाठशाला का प्रधान अध्यापक गोपाल से मिलने आया और बोला, "गोपाल, तुम्हारा पुत्र चंद्र बड़े-बड़े धनिकों के पुत्रों से कहीं अधिक मेधावी है। शायद यह बात तुम्हें मालूम नहीं है। ऐसे बालक को तो जी-तोड़ श्रम करके पढ़ाना भी माता-पिता का फर्ज़ है। चंद्र को काशी भेज दो, उसे हताश मत करो !"

अध्यापक की बातें सुनकर गोपाल चिंता में डूब गया। उसने अध्यापक की सलाह मानकर चंद्र को ऊँची शिक्षा दिलाने का निश्चय किया। वह कुछ सोचकर अपने मालिक चक्रभूपति के पास पहुँचा।

गोपाल ने सारा किस्सा जमींदार को सुनाकर

विनती की, "मालिक, आप मुझे थोड़ा धन उधार दे दीजिये। आप मेरे मासिक वेतन में से थोड़ा-थोड़ा काटते रहियेगा।"

चक्रभूपति पहले से ही खफ़ा था। वह अपने पुत्र की अवनति और एक नौकर के पुत्र की उन्नति से कुढ़ा हुआ बैठा था। गोपाल की बातों से उसके चिनगारी लग गयी।

चक्रभूपति खीझकर बोला, "गोपाल, तुमने यह नहीं बताया कि तुम्हें कितना धन चाहिए? अब तुम तो बूढ़े होते जा रहे हो! क्या तुम्हें सचमुच विश्वास है कि उधार का धन तुम चुका पाओगे? देखो, आवश्यकता चाहे जैसी भी क्यों न हो, तुम अपनी हैसियत देखो और अधिक लालच में मत पड़ो। अपने बेटे की पढ़ाई बन्द कर अब उसे कहीं नौकरी से लगा दो!"

चक्रभूपति को क्रोधित देखकर गोपाल सहम गया और चुपचाप वहाँ से उठकर चला गया।

चक्रभूपति अपनी मानसिक व्यथा को भुलाने के लिए ठंडी हवा में तालाब की तरफ चल पड़ा। तालाब के किनारे एक अच्छा बगीचा था। चक्रभूपति किसी पेड़ के नीचे बैठने का विचार करने लगा। इतने में उसकी दृष्टि अपने पुत्र कमल और साथ बैठे चंद्र पर पड़ी। वे दोनों एक पेड़ की छाया में बैठकर बात कर रहे थे।

चक्रभूपति के मन में यह कौतुहल जाग्रत हुआ कि ये दोनों क्या बात कर रहे हैं? ये दो मित्रों की हैसियत से बोल-बतिया रहे हैं या

मुझसे बताया है कि वे जमींदार साहब से उधार लेंगे। मुझे भी पूरा विश्वास है कमल, कि तुम्हारे पिताजी हमारी मदद अवश्य करेंगे।"

"लेकिन चंद्र, तुम उधार लेकर ऊँची शिक्षा क्यों पाना चाहते हो? तुम मेरी बात मान लो और अपने मन से काशी जाने का विचार एकदम निकाल दो। मैं तुम्हें धन दूँगा, तुम कहीं और जाकर कोई अच्छी नौकरी कर लो!" कमल ने समझाया।

"इस समय मुझे पढ़ाई के लिए धन की आवश्यकता है। अगर मैं आगे पढ़ नहीं सकता तो मुझे किसी और काम के लिए धन की ज़रूरत ही क्या है?" चंद्र ने दृढ़ स्वर में उत्तर दिया।

चंद्र का जवाब सुनकर कमल खीझ उठा और उसी क्षण वहाँ से उठकर घर की तरफ़ चल दिया।

प्रतिस्पर्धी की तरह वाद-विवाद कर रहे हैं— इस विचार को लेकर चक्रभूपति उस पेड़ के पीछे जाकर खड़ा हो गया, जिसकी छाया में बैठे कमल और चंद्र बातचीत कर रहे थे।

कमल कठोर स्वर में बोल रहा था, "देखो, चंद्र। मैंने तुम्हारी कोशिश के बारे में सुना है। कुछ भी क्यों न हो, तुम ऊँची शिक्षा पाने के लिए काशी नहीं जा सकते।"

इसके उत्तर में चंद्र ने शांत स्वर में कहा, "भाई, तुम मुझ पर यह दबाव क्यों डाल रहे हो कि मैं पढ़ने के लिए काशी न जाऊँ? तुम मुझे कृपा करके इसका कारण तो बताओ! मेरे पिताजी ने तो निश्चय कर लिया है कि वे मुझे पढ़ने के लिए काशी अवश्य ही भेजेंगे। उन्होंने

कमल और चंद्र का वार्तालाप सुनकर चक्रभूपति को अत्यन्त आनन्द हुआ। उसने घर लौटकर गोपाल को बुलाया और कहा, "देखो गोपाल, तुम ये पाँच सौ रुपये लो और अपने बेटे को कल ही ऊँची शिक्षा के लिए काशी भेज दो! इसके बाद फिर कभी तुम्हें धन की ज़रूरत पड़े तो निस्संकोच मुझसे माँग लेना। चंद्र की शिक्षा के पीछे जो भी धन व्यय होगा, वह पूरा मैं दूँगा। तुम्हें एक कौड़ी भी चुकाने की ज़रूरत नहीं है।"

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा, "राजन, चक्रभूपति के अन्दर अचानक जो यह

परिवर्तन आया, उसका क्या कारण है ? चंद्र के भीतर शिक्षा प्राप्त करने की प्रबल कामना देखकर जमींदार ने अपना विचार बदला या चंद्र के अन्दर अपने प्रति विश्वास देख कर उसने उसे मदद करना स्वीकार किया । अपने पुत्र को विद्याध्ययन में असफल देख निराश हुआ चक्रभूपति इतने निस्वार्थ भाव से चंद्र की सहायता करने को कैसे तत्पर होगया ? इस सन्देह का समाधान अगर आप जानकर भी न करेंगे तो आपका सिर फूटकर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा ।"

विक्रमार्क ने उत्तर दिया, "अपने पुत्र कमल और गोपाल के पुत्र चंद्र के बीच हुए वार्तालाप को सुनकर चक्रभूपति के सामने एक नग्न सत्य प्रकट होगया । उसने यह जान लिया कि चंद्र की शिक्षा में उन्नति देखकर कमल ईर्ष्या का शिकार हो गया है । वास्तव में अपने अन्दर उन्नति करने की इच्छा जागृत होने पर ही व्यक्ति दूसरे उन्नतिशील व्यक्ति से ईर्ष्या करता है । चक्रभूपति ने भाँप लिया कि कमल के अन्दर चंद्र के प्रति प्रतिस्पर्धा का यह भाव उसकी उन्नति में नींव का काम करेगा । साथ ही, एक बात और भी है । कमल की ईर्ष्या अत्यन्त मामूली है । यही कारण है कि वह चंद्र को अपने निश्चय पर दृढ़ देख वहाँ से चुपचाप उठकर चला जाता है, उसे किसी भी प्रकार का न तो नुक़सान पहुँचाता है और न तो उसके रास्ते में आने का ही प्रयत्न करता है । कमल के अन्दर ईर्ष्या का बीज एक सहपाठी बालक की उचित प्रतिक्रिया का फल है, जो उसकी अपनी उन्नति में भी सहायक होगा । अपने पुत्र के अन्दर यह आशाजनक परिवर्तन देखकर चक्रभूपति चंद्र की ऊँची शिक्षा के लिए पूर्ण आर्थिक सहयोग देने को तैयार हो जाता है । यह सहायता चक्रभूपति विशुद्ध स्वार्थ से प्रेरित होकर करता है, चंद्र के हृदय में स्थित अपने प्रति विश्वास या उसकी उच्च शिक्षा की कामना से प्रेरित होकर नहीं करता ।"

राजा के इस प्रकार मौन होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य होकर पुनः पेड़ पर जा बैठा ।

(कल्पित)

ज्ञानोपदेश

शंकरपुर में एक बार महात्मा हंसानन्द का आगमन हुआ। वे एक धर्मशाला के चबूतरे पर बैठ गये और लोगों को न्याय, धर्म, कर्त्तव्य एवं सदाचार के बारे में सदुपदेश देने लगे। धीरे-धीरे बहुत संख्या में लोग उनके पास आने लगे। अपने उपदेश के अंत में महात्मा उनसे कहते, "भद्रजनो, आप अपने साथ मुट्ठी भर चावल और पाँच पैसे भी लाया करें !"

शंकरपुर में शरभ एक उच्चशिक्षा प्राप्त युवक था। एक दिन उसने महात्मा हंसानन्द को श्रद्धापूर्वक प्रणाम किया, फिर पूछा, "स्वामीजी, आपके उपदेश सुनने के बाद गलत मार्ग पर चल रहे कई जन सदाचारी बन गये हैं। आप जबसे आये हैं, गाँव में झगड़े-फसाद और मारपीट की घटनाएँ बहुत कम हो गयी हैं। पर आपके व्यवहार को लेकर मेरे मन में शंका आगयी है। आप आज्ञा दें तो मैं अपनी यह शंका आपके सामने रखना चाहता हूँ।"

"जो पूछना चाहते हो, निर्भय होकर पूछो, बेटा !" महात्मा हंसानन्द ने कहा।

"आप अपने उपदेशों में लोभ, लालच, धन की कामना को बराबर अनुचित बताते आरहे हैं। फिर आप ग्रामवासियों से चावल और पैसों की इच्छा क्यों रखते हैं ? मैं बस इतना ही जानना चाहता हूँ।" शरभ ने विनम्र भाव से कहा।

शरभ का सवाल सुनकर महात्मा हँस पड़े, फिर बोले, "बेटा, तुम्हारी बातों से यह विदित होता है कि मेरे उपदेशों से ग्रामवासियों का हित हो रहा है। मैं यही हित कुछ दिनों बाद पड़ोसी ग्रामवासियों का भी करना चाहता हूँ। इसलिए मेरा शरीर-धारण करना आवश्यक है न, बेटा !"

शरभ नतमस्तक होगया। दूसरे दिन से ग्रामवासी महात्मा हंसानन्द के लिए अपनी भेंट में चावल के साथ नमक, दाल, सब्जी, फल आदि भी लाने लगे।

हमारे मन्दिर

श्रीरंगम

श्रीरंगम के मन्दिर में शेषशयन रंगनाथ स्वामी की मूर्ति प्रतिष्ठित है। कहा जाता है कि पहले कभी यह मूर्ति अयोध्यानगरी में थी। श्री रामचंद्र के पूर्वज इस मूर्ति की पूजा करते थे और यह प्रतिमा अयोध्या के राजभवन से यहाँ पर लायी गयी है।

रावण का संहार करके जब श्रीरामचंद्र सीता और लक्ष्मण के साथ लंका से अयोध्या लौटे थे, तब विभीषण भी उनके साथ आया था। उसने अयोध्या के राजभवन में इस प्रतिमा को देखा तो वह अत्यन्त प्रभावित हुआ। उसकी भावना देखकर रामचंद्र ने यह प्रतिमा उसे दे दी थी।

प्रतिमा प्रदान करते समय यह शर्त रखी गयी थी कि लंका पहुँचने तक मार्ग के बीच प्रतिमा को कहीं भी नहीं उतारा जायेगा। पर श्रीरंगम से जाते समय विभीषण ने मूर्ति को एक स्थान पर नीचे रख दिया। इसके बाद बहुत प्रयत्न करने के बाद भी वह उसे उठा नहीं पाया।

प्रतिमा को घेर कर मन्दिर का निर्माण हुआ। उसके बाद से यह स्थान एक दिव्य क्षेत्र के रूप में विख्यात हो गया। हज़ारों की संख्या में भक्त और महात्मा लोग रंगनाथ मन्दिर के दर्शन के लिए आने लगे। आण्डाल, जिसे गोदादेवी भी कहा जाता है और जो एक महान भक्तिन थी, रंगनाथ की सेवा करके उनसे तद्रूप होगयी थी।

कालक्रम में रंगनाथ मन्दिर विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रमों का केंद्र बना। सुप्रसिद्ध तमिल कवि कम्बन ने रामायण की रचना की और भक्तों के समक्ष उसका पाठ करके उसे मन्दिर के देव को अर्पित कर दिया।

बारहवीं एवं सोलहवीं शताब्दी में दिल्ली के बादशाहों ने इस मन्दिर पर आक्रमण किया। एक बादशाह ने तो गर्भगृह में स्थित मूर्ति को उठा लेजाने का प्रयत्न भी किया, पर भक्त उसे तिरुपति क्षेत्र में ले गये और उसे सुरक्षित रखा। पर उत्सव मूर्ति को बादशाह अपने साथ ले गया।

कहते है रामानुजाचार्य बादशाह से मिले और उन्होंने उत्सवमूर्ति को पुनः श्रीरंगम ले जाने की अनुमति माँगी। बादशाह ने उनके आग्रह को स्वीकार कर अनुमति दे दी।

बादशाह की पुत्रीने उस मूर्ति के प्रति अपना अपार प्रेम प्रदर्शित किया। वह मूर्ति को ले जाने वाली गाड़ी के पीछे चलने लगी। उसकी भावना के स्मृति-चिन्ह के रूप में श्रीरंगम मन्दिर में कुछ मुस्लिम विश्वासों को अमल में लाया गया।

एक बार बादशाह के एक सिपहसालार ने गुप्त रूप से मन्दिर को ध्वस्त करने का षडयंत्र रचा। इस सब्बन्ध में उसने अपने साथियों के साथ जो गुप्त मंत्रणाएं कीं, उन्हें मन्दिर की एक नर्तकी ने आड़ में रहकर सुन लिया।
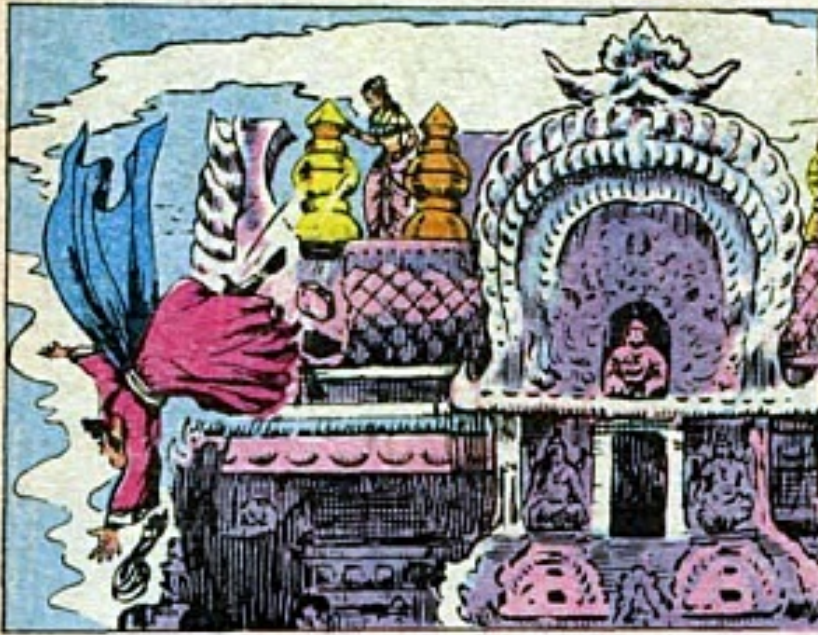
उस नर्तकी ने सिपहसालार से मिलकर उससे मीठी बातें कीं और कहा कि सारा खजाना गोपुर के शिखर पर सुरक्षित रखा गया है। वह उसे बहलाकर गोपुर की चोटी पर ले गयी। जब वह असावधान था, तब नर्तकी ने मौक़ा पाकर उसके पैर के नीचे की शिला को खिसका दिया। सिपहसालार गोपुर से नीचे गिरकर अपने प्राण गँवा बैठा।

सात प्राकारों, एक सहस्र स्तम्भों तथा ओंकार विमान से सुशोभित श्रीरंगम मन्दिर में अद्भुत शिल्प-रचना की गयी है।
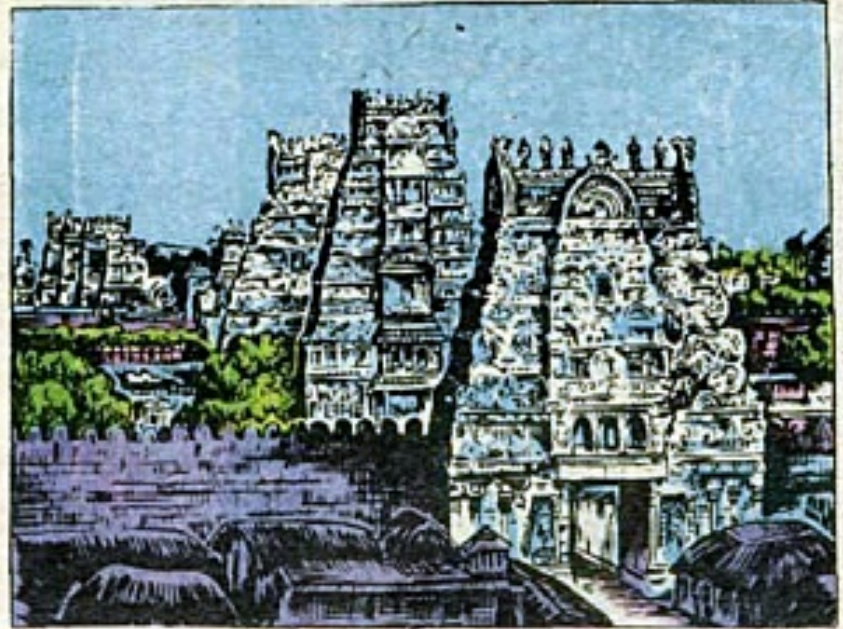
इस मन्दिर में मनाये जानेवाले उत्सवों में वैकुण्ठ एकादशी विशेष प्रमुख पर्व है। योगमाया स्वरूपिणी एकादशी देवी ने मुरा नाम के राक्षस का जिस शुभ दिन संहार किया, वह एकादशी का दिन था। इस मंगल दिन श्रीरंगनाथ के दर्शन करना बड़ा पुण्यप्रद माना जाता है। हज़ारों की संख्या में श्रद्धालु भक्त यहाँ हर वर्ष एकत्रित होते हैं।

अनोखा उपाय

सोमनाथ, रामनाथ और मल्लिनाथ पड़ोसी थे। सोमनाथ के दायीं ओर रामनाथ का मकान था और बायीं ओर मल्लिनाथ का। रामनाथ और मल्लिनाथ तो नेक स्वभाव के थे लेकिन सोमनाथ बड़ा दुष्ट और उद्दण्ड था। वह पड़ोसियों को सताने का कोई न कोई तरीका खोजने में लगा रहता था। उन्हें गालियां देकर उन्हें लड़ने के लिए उकसाना और फिर उस बात का मज़ा लूटना इसकी आदत बन गयी थी। उसने अपने पड़ोसियों पर भोंडे गीत रच रखे थे और वह उन्हें ऊँचे स्वर में गाया करता था। रास्ते में कभी सोमनाथ की भेंट रामनाथ या मल्लिनाथ से हो जाती तो वह उन पर कटाक्ष करके बिना किसी बातचीत के अवहेलना करके निकल जाता था।

मल्लिनाथ सोमनाथ की इन हरकतों पर तनिक भी ध्यान नहीं देता था और जो सहन करना होता था, सहन कर लेता था। लेकिन रामनाथ सोमनाथ की उद्दण्डता को सहन नहीं कर पाता था। एक दिन उसने सोमनाथ के साथ टंटा छेड़ दिया। सोमनाथ तो यह चाहता ही था। वह ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाकर रामनाथ पर टूट पड़ा। रामनाथ घबराकर अपने मकान के भीतर चला गया।

सोमनाथ इतने पर भी सन्तुष्ट न हुआ, चिल्लाकर बोला, "मुझे उकसा रहे हो ? मैं चुप रहनेवाला नहीं हूँ। देखना, मैं तुम्हें कैसा सबक़ सिखाता हूँ।"

सोमनाथ इतना ही न करता, बल्कि उसके मकान के सामने जो कुछ कूड़ा-कचरा जमा होता, वह पड़ोसियों के घरों के सामने फिंकवा देता। उसका विचार था कि ऐसा होने पर मल्लिनाथ भी रामनाथ के साथ लड़ने के लिए आ धमकेगा। तब वह उन दोनों को खूब खरी-खोटी सुनायेगा और इस तरह अच्छा-ख़ासा एक तमाशा बन खड़ा होगा। सोमनाथ के

सुधीर वर्मा

लिए यह सब मनोरंजन था। पर मल्लिनाथ ने किसी भी प्रकार की कोई प्रतिक्रिया नहीं दिखाई। रामनाथ ने एक-दो बार मल्लिनाथ का सहयोग भी चाहा, ताकि सोमनाथ को अच्छा सबक़ सिखाया जा सके, पर मल्लिनाथ तटस्थ बना रहा।

रामनाथ ने एक दिन स्पष्ट रूप से मल्लिनाथ को अपने मन की बात बतायी तो वह हँसकर बोला, "सुनो राम, मैं किसी भी हालत में पास-पड़ोसवालों से झगड़ा करना बिलकुल पसन्द नहीं करता।"

यह जवाब सुनकर रामनाथ का पारा चढ़ गया। उसने अपना क्रोध उतारने के लिए अपने घर का सारा कूड़ा-करकट मल्लिनाथ के मकान के आगे फेंक दिया। इस पर भी मल्लिनाथ चुप ही रहा।

इस प्रकार दो दिन बीत गये। तीसरे दिन रामनाथ ने मल्लिनाथ को पुकार कर कहा, "दोस्त सुनो सोमनाथ हम दोनों के बीच लड़ाई डालने के लिए मेरे मकान के सामने का कूड़ा-करकट तुम्हारे मकान के सामने फेंक देता है। दिन-प्रतिदिन उसकी शरारतें बढ़ती जारही हैं। इसलिए हमें कोई न कोई उपाय करना ही होगा।"

अब मल्लिनाथ ने रामनाथ को समझाते हुए कहा, "तुम सोमनाथ की दुष्टता से अच्छी तरह परिचित हो। हम अगर उसके किसी भी काम में दख़ल न दें तो मामला ख़त्म हो जायेगा। तुम पर मेरा गहरा विश्वास है, इसलिए लड़ाई का सवाल ही नहीं उठता है।"

रामनाथ ने चकित होकर पुछा— "इतना सारा कूड़ा-करकट तुम्हारे मकान के सामने फेंक देने पर भी क्या तुम चुप रहोगे ?"

"इसके झगड़ा करने की बात है ? हम लोग प्रतिदिन अपने मकान के सामने सफाई करते ही हैं। अपने कूड़े के साथ उस कूड़े को भी हटा देने पर काम बन जायेगा बस।" मल्लिनाथ ने कहा।

"तुम डरपोक हो, इसीलिए सोमनाथ की करतूतें बढ़ती जारही हैं। चाहे जो हो, उसे उचित सबक़ सिखाना ही पड़ेगा।" रामनाथ उबल कर बोला।

मल्लिनाथ ने शांत स्वर में कहा, "दोस्त, एक बात न भूलो ! हमारे मकान के सामने कूड़ा चाहे थोड़ा हो या ज्यादा, उसे साफ़ करने में एक सा ही समय लगता है । लेकिन यह बात न भूलो, अगर हम सोमनाथ के साथ हर रोज़ लड़ना शुरू कर देंगे तो हमारा बहुत सारा समय व्यर्थ ही नष्ट हो जायेगा ।"

"यह सोचकर यदि हम चुप रह जाते हैं तो वह हमें बुज़दिल और निकम्मा समझेगा ।" रामनाथ ने कहा ।

"जब हम बुज़दिल और निकम्मे हैं ही नहीं, तो वह फिर हमें चाहे जो समझे, इससे हमारा कुछ नहीं बनता-बिगड़ता ।" मल्लिनाथ ने समझाया ।

रामनाथ कुछ क्षण चुप रहकर बोला, "हम लोग भी चाहे तो उसे उसकी करनी से कहीं अधिक यातनाएँ दे सकते हैं !"

"यह कैसे हो सकता है, रामनाथ ! सोमनाथ तो बेकार है, हमें तो दम लेने की फ़ुरसत भी नहीं है । इसके अलावा जो समझदार होता है, वह सदा सर्वथा हर मुसीबत को अपने अनुकूल निश्चय ही बना लेता है । मैं तो यह कहूँगा कि सोमनाथ ने एक प्रकार से मेरा तो उपकार ही किया है !" मल्लिनाथ ने कहा ।

"क्या कहा ? सोमनाथ ने तुम्हारा उपकार किया है ?" रामनाथ मानो आसमान से गिरा ।

"हाँ, हाँ, उपकार किया है । सोमनाथ की करतूतों को मैं और मेरे परिवार वाले सहन नहीं कर पाते हैं । उसके स्मरण मात्र से हमारे
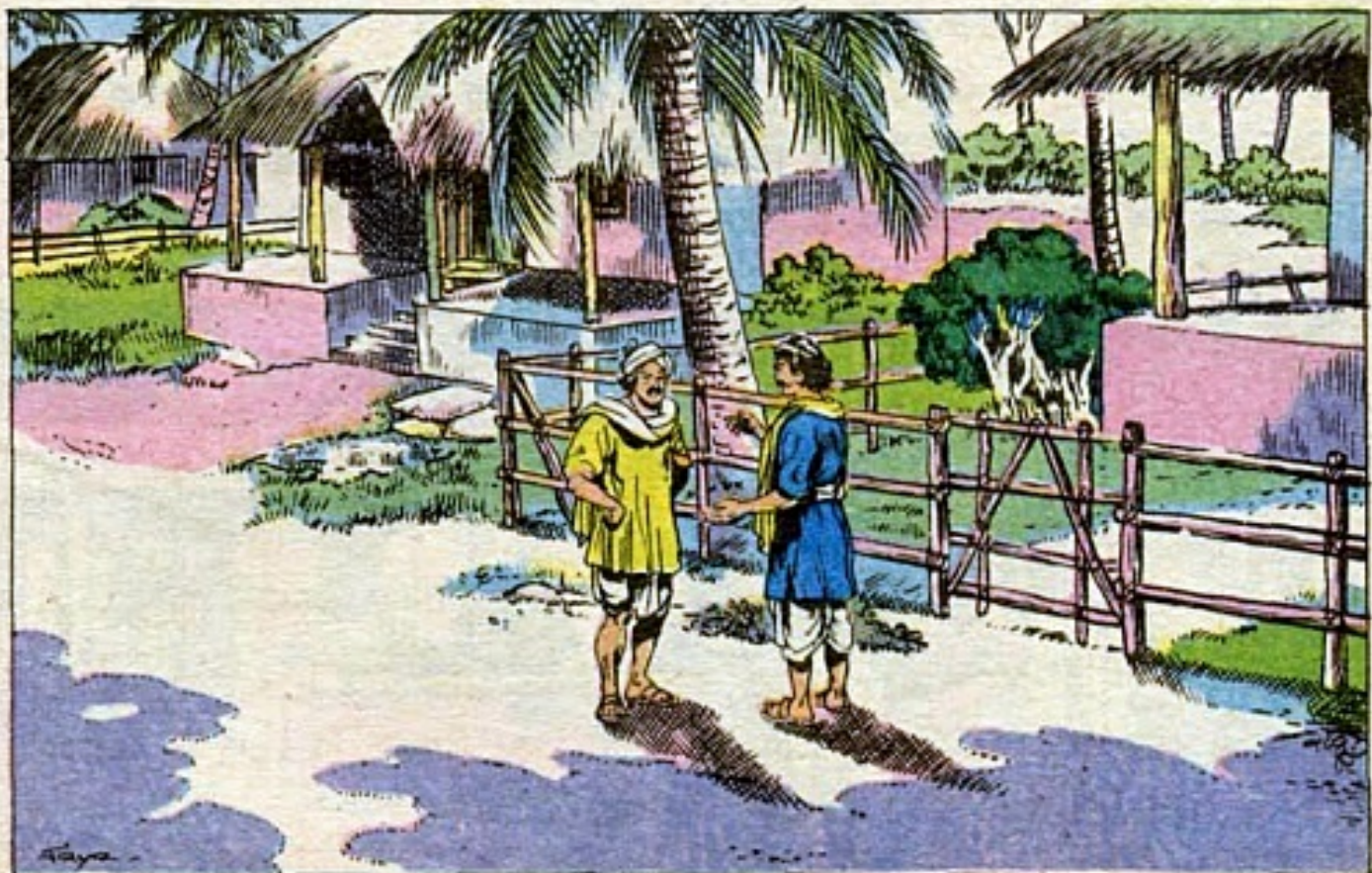
तन-बदन में आग लग जाती है। इसलिए हमने निश्चय कर लिया है कि उसके बारे में सोचा नहीं जाये। और ऐसा तभी हो सकता हैं जब हम पूरे दिन व्यस्त रहें।" मल्लिनाथ ने कहा।

"व्यस्त रहने का तुमने कौन सा उपाय निकाला ?" रामनाथ ने पूछा।

"मैं पहले से कहीं अधिक समय अपने खेत के कामों में देता हूँ। मेरे परिवार के अन्य सदस्य टोकरियाँ, चटाई बुनने और खिलौने बनाने के कामों में काफ़ी कुशलता प्राप्त कर चुके हैं। इससे हमारे परिवार में अतिरिक्त आमदनी भी हो रही है। सोमनाथ ने ही हमारा यह उपकार किया है। मल्लिनाथ ने पूछा।

मल्लिनाथ की बात सुनकर रामनाथ अवाक रह गया। उसे ऐसे अनोखे उपाय की आशा नहीं थी। वह मल्लिनाथ से विदा लेकर अपने घर पहुँचा और सारा किस्सा अपनी पत्नी हंसा को सुनाया।

"अरे, हम तो ऐसा सोच भी नहीं सकते थे। अब हम भी मल्लिनाथ का अनुकरण करेंगे।" हंसा बोली।

उस दिन के बाद रामनाथ और उसका परिवार मल्लिनाथ के परिवार का अनुकरण करने लगा। एक तरफ़ उनकी आमदनी बढ़ गयी, दूसरी तरफ़ उन्हें सोमनाथ के बारे में सोचने का समय भी न रहा।

समय बीतता गया। सोमनाथ के मकान के दायें-बायें दो पक्के मकान उठ खड़े हुए। अपनी शरारत, गाली-गलौज और शोर-शराबे की पड़ोसियों द्वारा इस प्रकार अवहेलना होती देख कर सोमनाथ अत्यन्त व्याकुल हो उठा।

पड़ोसियों के पक्के मकानों को देखकर सोमनाथ मानसिक व्याधि का शिकार होगया। वह सोचने लगा, "मेरे कारण ही ये दोनों झोंपड़ी से उठकर पक्के मकानों में रहने लगे हैं। कुछ दिन और मैं यहाँ रहा, तो ये लोग महल ही बनवा लेंगे।"

सोमनाथ अब और अधिक वहाँ न रह सका। उसने अपनी झोंपड़ी सस्ते दामों पर बेच दी और किसी और गाँव को चला गया।

शिवलीलाएँ

पार्वती ने शिवभक्त चिरुतोंड को देखने की इच्छा प्रकट की। भगवान शिव ने अनुकूल अवसर रचने के लिए इंद्र से कांचीपुर प्रदेश में लगातार पानी बरसाने का अनुरोध किया। कांचीपुर में इक्कीस दिन तक अविरल वर्षा हुई और बाइसवें दिन वर्षा थम गयी। तीन सप्ताह तक चिरुतोंड दिन-रात शिवभक्तों को भोजन कराता रहा। ईंधन समाप्त हो गया तो चिथडों को तेल में भिंगो कर चूल्हा गरम रखा गया। और रसोई चलती रही। कैसी भी विपदा आने पर भी चिरुतोंड ने अपना व्रत भंग नहीं किया।

जब बाइसवें दिन वर्षा-बन्द होगयी तो चिरुतोंड के घर कोई अतिथि न आया। चिरुतोंड प्रतिदिन एक शिवभक्त को तो अवश्य ही भोजन कराता था। इसके उपरान्त ही वह आहार ग्रहण करता था। यह उसका सदा का नियम था।

दोपहर होगयी तो उसने बाहर आकर देखा। कहीं किसी शिवभक्त का पता नहीं था। सारे चबूतरे ख़ाली पड़े थे। चिरुतोंड कोई अतिथि पाने के लिए हर गली में चक्कर लगाने लगा। सारे क़िले के अहाते में उसे एक भी शिवभक्त नहीं मिला। तब चिरुतोंड क़िले के बाहर निकला और आस पास के इलाक़ों में शिवभक्तों की खोज करने लगा।

तब एक बगीचे के पास एक उजाड़-सी खड़ी झोंपड़ी में चिरुतोंड को एक वृद्ध दंपति दिखाई दिये। बूढ़े के केश सफ़ेद होकर जटाएँ बन गये थे। उसके भाल पर भभूत की रेखाएँ

३. चिरुतोंडनंबी की कहानी

थीं । बूढ़ी एक दम अन्धी थी । बूढ़ा बाघ की चर्म पर लेटा हुआ था और बूढ़ी उसके पैर दबा रही थी ।

चिरुतोंड ने वृद्ध दंपति को हाथ जोड़कर प्रणाम किया और उनसे निवेदन किया, "आज आप दोनों मेरे घर पधार कर शिवार्चना कर मुझे कृतार्थ कीजिये !"

वृद्ध ने कहा, "बेटा, इधर एक वर्ष से मैं शिव को लक्ष्य कर निराहार रहने का व्रत कर रहा हूँ । उस व्रत की समाप्ति नरमांस द्वारा ही संभव है । नरबलि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य जाति में से किसी भी जाति की हो सकती है । वह नर छोटी आयु का हो और स्वस्थ हो । उसका वध स्वयं उसके माता-पिता करें । वे ही हमें उसका मांस पकाकर परोसें । साथ ही यह शर्त भी है कि बालक का पिता हमारी पांक्ति में बैठकर वही भोजन करे !"

"बाबाजी, मेरा नाम चिरुतोंड नंबी है । मेरा व्रत शिवभक्तों के व्रतों को पूर्ण करना है । आपके आदेशानुसार आपका आतिथ्य करूँगा । आप कृपाकर आहार के लिए मेरे घर पधारिये !" चिरुतोंड ने अविचलित स्वर में उत्तर दिया ।

"तुमने तो वचन दे दिया कि मेरे व्रत को पूर्ण करोगे । पर याद रखो, इसे तुम्हारी पत्नी को भी तो स्वीकार करना चाहिए !" वृद्ध ने कहा ।

चिरुतोंड तत्काल अपने घर लौटा और उसने अपनी पत्नी तिरुवेंगनांची को सारा हाल सुनाया ।

"हम तो अपने मांस को काट-पकाकर खिलाने के लिए भी तैयार हैं । आप अतिथियों को सहर्ष तुरन्त घर ले आइये ।" तिरुवेंगनाची बोली ।

इस बीच वृद्ध बने भगवान शिव चिरुतोंड के पुत्र सिरियाल की पाठशाला में गये और उस बालक से बोले, "बेटा, तुम्हारा पिता दुष्ट है । वह तुम्हें मार कर तुम्हारा मांस किसी अतिथि को खिलानेवाला है । तुम तुरन्त यहाँ से भाग जाओ !"

"बाबाजी, आपकी बातें तो मुझे बड़ी विचित्र प्रतीत हो रही हैं । कहा जाता है— परोपकारार्थमिदं शरीरम् । तो क्या आपके विचार

इसके बाद तिरुवेंगनाची ने अपने पुत्र को गोद में लिटाया। चिरुतोंड ने पुत्र-वध किया। फिर सिरियाल का मांस पकाकर उन दोनों पति-पत्नी ने वृद्ध दम्पति को परोस दिया। तब वृद्धा ने चिरुतोंडनंबी से कहा, "सुनो अब तुम अपने पुत्र-सहित मेरे साथ बैठकर खाना खाओ तो !"

पुत्र की बात सुनकर चिरुतोंड कुछ समझ नहीं सका। पुत्र कहाँ से लाये ? पर फिर कुछ सांकेतिक भाषा में ही बोला, "बाबाजी, मेरा पुत्र तो कहीं गया है। भोजन ठंडा हो जायेगा। आप कृपया भोजन प्रारंभ करें।"

"तुम अपनी पत्नी से कहो कि वह पुत्र को आवाज़ दे। पुकार सुनकर लड़का दौड़ा-दौड़ा चला आयेगा।" वृद्ध ने कहा।

तिरुवेंगनांची जोर से पुकार उठी, "बेटा सिरियाल ! आओ, आजाओ बेटा !"

दूसरे ही क्षण सिरियाल बाहर से दौड़ता हुआ घर के अन्दर आगया।

चिरुतोंड ने आश्चर्यचकित हो मुड़कर वृद्ध दम्पति की ओर देखा। देखा, आसन पर पार्वती-परमेश्वर प्रत्यक्ष विराजमान हैं। उन्होंने अत्यन्त प्रसन्न होकर चिरुतोंड को आशीर्वाद दिया और उसे उसके पूर्व जन्म का वृत्तान्त सुनाया।

प्राचीन काल में दक्षिण में पोन्तपिनाडु प्रदेश में एक जंगल फैला हुआ था। उसमें शबर लोगों का निवास था। उनके प्रधान नगर का

में दधीचि, शिबि आदि अज्ञानी थे ?" बालक सिरियाल बोला।

कुछ देर बाद चिरुतोंड उस जीर्ण कुटिया में लौट आया। उसने वृद्ध ब्राह्मण को अपने कंधों पर बिठाया और अंधी बूढ़ी का हाथ पकड़ कर उन दोनों को घर ले आया।

माता-पिता ने सिरियाल को अभ्यंगन स्नान कराया। उसे अलंकार पहनाये, फिर बोले, "बेटा, तुम शिवभक्तों का आहार बनने को तैयार हो ?"

"पिताजी, मैं बड़ी प्रसन्नता से तैयार हूँ। मैं किसी शिवभक्त का आहार बनूँ, इससे बड़ पुण्य की बात मेरे लिए और क्या हो सकती है ?" बालक सिरियाल ने तुरन्त जवाब दिया।

नाम था उड्डुमूरु । जंगली जाति के शबर शिकार खेलकर तथा खेतीबाड़ी का काम करके अपना जीवन बिताते थे ।

शबरों का राजा नाथनाथ था । उसकी पत्नी का नाम तंडे था और पुत्र का नाम तिन्नडु था । तिन्नडु ने धनुर्विद्या का अभ्यास किया । इस विद्या में वह ऐसा कुशल निकला, मानो वह विद्या उसे जन्म से ही प्राप्त हो । धनुर्विद्या आरंभ करने के चालीस दिनों के अन्दर ही वह भागते हुए हिरनों और आसमान में उड़ रहे पक्षियों का शिकार करने में सफल होगया ।

शबरों ने अपने राजा से अनुरोध किया कि राजकुमार तिन्नडु को शिकार खेलने की विद्या का अभ्यास करना चाहिए । शबरों ने शिव की पूजा की, बलि चढ़ायी और उत्सव मनाया । दूसरे दिन शबर राजा ने राजकुमार तिन्नडु के साथ शिकार खेलने जानेवाले लोगों का चुनाव किया । शिकार के लिए आवश्यक सामग्री तथा जाल और कुत्तों को तैयार कर लिया अनुचरों को साथ लेकर तिरुपति के पहाड़ों की ओर निकल पड़ा ।

शिकार का खेल चलता रहा । शबरों ने तरह-तरह के जानवरों तथा पक्षियों का आखेट किया । वे मांस के टुकड़ों को तीलियों में पिरोकर सेंकते और उन टुकड़ों को शहद में डुबोकर खाते । इस प्रकार जंगलों में उन्होंने काफ़ी दिन बिता दिये ।

एक दिन शिकार खेलकर तिन्नडु एक दम थक गया और एक मौलश्री वृक्ष की छाया में सो गया ।
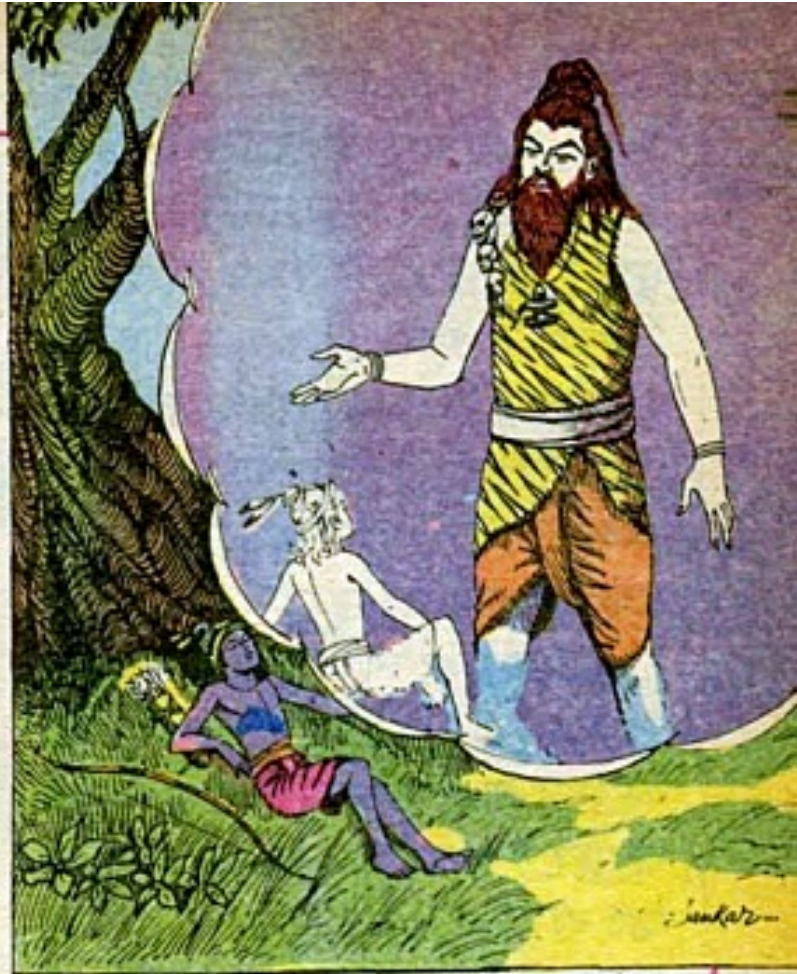
तिन्नडु ने एक सपना देखा । सपने में एक महापुरुष दिखाई दिये । उन्होंने अपने सारे बदन पर भभूत लगायी हुई थी और कमर पर बाघचर्म थी । उन महात्मा के जटाएं लटक रही थीं, वक्ष पर मुण्डमाला और कंठ में लिंग धारण कर रखा था । उन्होंने बड़े प्रेम से तिन्नडु से कहा, "सुनो वत्स, यहाँ सुवर्णमुखी नदी के किनारे वटवृक्ष के नीचे शिव जी हैं । तुम वहाँ जाकर उनकी पूजा करो !" इसके बाद वे महात्मा अदृश्य होगये ।

राजकुमार तिन्नडु चौंककर नींद से जाग उठा । उसने चकित होकर चारों तरफ़ दृष्टि

डाली । उसके साथी शिकार खेलने में व्यस्त थे । उन लोगों की आवाज़ें सीटियों के साथ सुनाई दे रही थीं । इतने में एक जंगली सुअर शिकारियों से बचकर गुर्राता हुआ उसके पास आ पहुँचा । तिन्नडु ने धनुष उठा कर उसका पीछा किया । जंगली सुअर तिन्नडु के निशाने से बचकर भागता रहा और फिर काफ़ी दूर जाकर ग़ायब हो गया ।

जहाँ वह सुअर अदृश्य हुआ था, उस स्थान पर वटवृक्ष के नीचे एक शिवालय था । यही वह स्थान था, जिसके बारे में सपने में आये महापुरुष ने बताया था । इस पूरी घटना को शिव की लीला जानकर तिन्नडु की आँखों से आनन्द-वाष्प गिरने लगे । उसने लिंग को साष्टांग प्रणाम किया और भक्तिभाव से बोला, "भगवान, इस पहाड़ी प्रदेश में बाघ और सिंहों का विचरण होता है । आप अकेले नदी के किनारे क्यों बैठे हैं ? आपको भूख-प्यास लगने पर अन्न-जल कौन लाकर देगा ? हमारे उडुमूरु में आजाओ । मेरी छोटी-बड़ी बहनें आपको हिरन-सुअर आदि पशुओं और तरह-तरह के पक्षियों का मांस पकाकर खिलायेंगी । अनेक प्रकार के चावलों की खीर पकाकर खिलायेंगी । अनेक तरह के मधु एवं फल आपको प्राप्त होंगे । आप हमारे गाँव में आजाइये, वरना मैं यहाँ से हिलूँगा तक नहीं ।"

इतने में अन्य शबर लोग तिन्नडु की खोज करते हुए वहाँ आ पहुँचे और पूछा, "तिन्नडु, तुमने जिस जंगली सुअर का पीछा किया था, उसका क्या हुआ ?" पर तिन्नडु शिव के ध्यान में मग्न था । उसने कोई उत्तर नहीं दिया । सबने उसे घर चलने के लिए कहा, तब तिन्नडु ने उत्तर दिया, "ये भगवान शिव जब तक मेरे साथ नहीं चलेंगे, मैं यहाँ से हिलूँगा तक नहीं । तुम लोग यहाँ से चले जाओ !"

यह कहकर तिन्नडु ने आँखें बन्द कर लीं और शिव के ध्यान में मग्न हो गया । शबर लोग तिन्नडु के हठ से परिचित थे इसलिए वे निराश होकर उसके पिता को यह समाचार देने के लिए वहाँ से चले गये ।
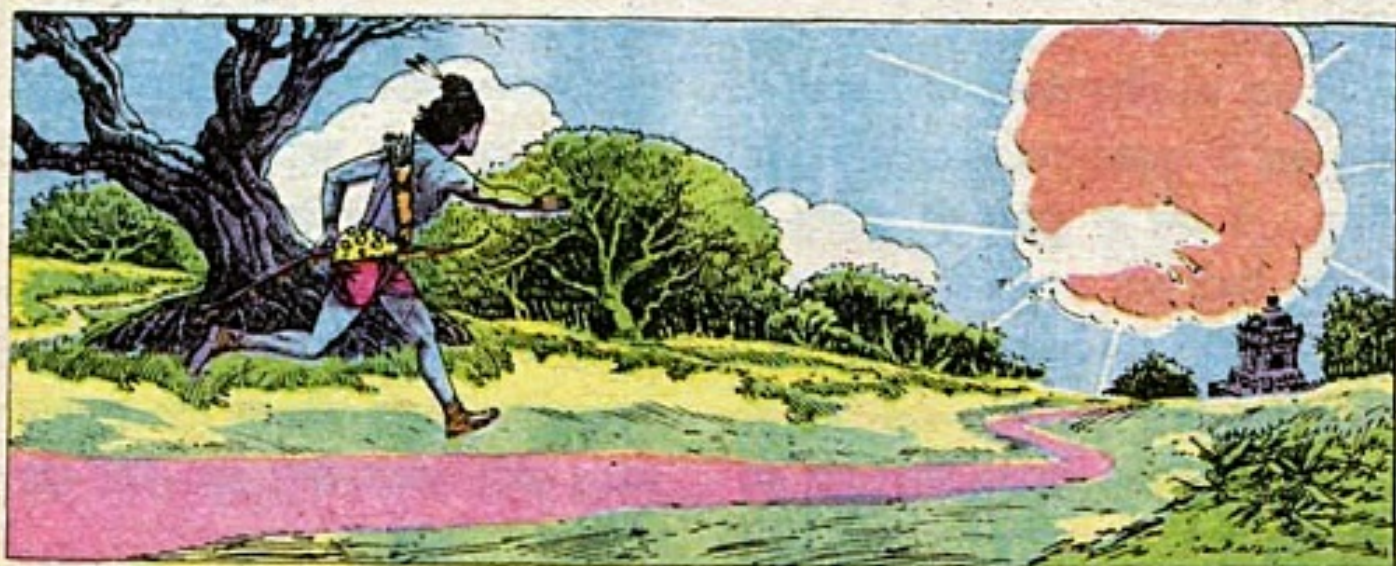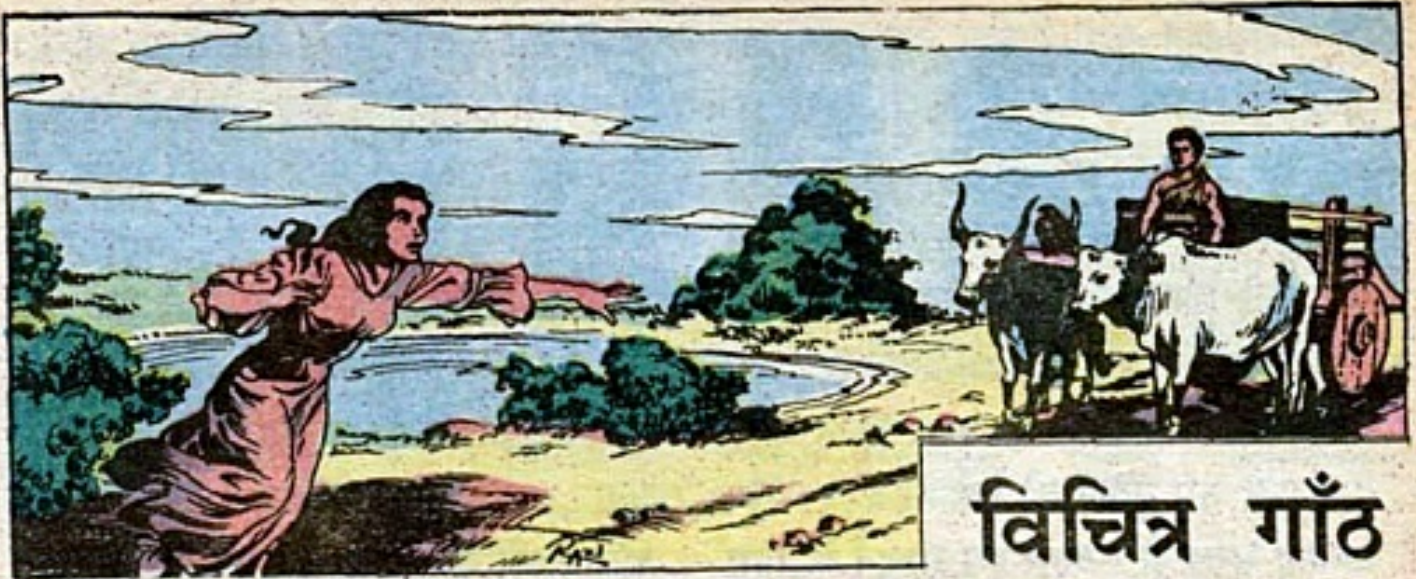
विचित्र गाँठ

प्राचीन काल की बात है, फ्रिजिया देश में गोर्डियन नाम का एक किसान युवक रहता था। वह एक दिन अपनी बैलगाड़ी में गाँव से नगर की ओर चल पड़ा।

गाड़ी अभी थोड़ी ही दूर गयी थी कि कहीं से एक गरुड़ पक्षी उड़ता हुआ आया और बैलों के बीच कूबर पर बैठ गया। ग्रीकवासियों में यह विश्वास प्रचलित था कि गरुड़ पक्षी का इस प्रकार कूबर पर बैठना महान भाग्य का सूचक शुभ संकेत है। गोर्डियन चकित हो यह विचारने लगा कि इस शुभ शकुन का कौन सा फल उसे हासिल होगा।

तभी टेलिमसस शहर के राजा का अचानक देहान्त होगया। उसका कोई वारिस न था। सड़कों पर भीड़ इकट्ठा थी और अराजकता फैलने का डर था। उस समय एक भक्तिन के भीतर किसी देवी का प्रवेश हुआ और उसने चौराहे पर एकत्रित हुई भीड़ को सम्बोधित कर कहाः "तुम लोग निराश मत होओ! तुम्हारा राजा एक बैलगाड़ी पर सवार होकर इधर ही चला आ रहा है। गाड़ी पर उसकी बग़ल में तुम्हारे राज्य की भावी रानी बैठी हुई है। गाड़ी के कूबर पर एक गरुड़ पक्षी बैठा है।"

उस भक्तिन में सबका अटूट विश्वास था। उससे ऐसी सूचना पाकर सब शान्त होगये और अपने नये राजा का इन्तज़ार करने लगे।

भक्तिन की बातें एक युवती के कानों में भी पड़ीं। वह तुरन्त नगर के बाहर दौड़ गयी।

अभी वह शहर-बाहर के कच्चे रास्ते पर थोड़ी ही दूर गयी थी कि उसने सामने से एक बैलगाड़ी को आते हुए देखा। उस गाड़ी के कूबर पर एक गरुड़ पक्षी बैठा हुआ था। गाड़ी में एक युवक था, पर उसकी बगल में कोई स्त्री नहीं बैठी थी। शहर से आयी हुई उस युवती ने गाड़ी के पास जाकर गोर्डियन से कहा, "ठहरो, मुझे भी गाड़ी पर चढ़ने दो!"

प्राचीन ग्रीक कहानी

गोर्डियन ने गाड़ी रोककर उस युवती को गाड़ी पर अपनी बगल में बैठा लिया ।

"अगर तुम मेरे साथ विवाह करने का वचन दो तो मैं शाम तक तुम्हें एक अद्भुत सौभाग्य का अधिकारी बना दूँगी ।" युवती ने कहा ।

गोर्डियन ने गरुड़ पक्षी को देखते ही समझ लिया था कि आज उसका भाग्य खुलने वाला है । उसने उस युवती को देखकर कहा, "तुम अत्यन्त सुन्दर हो । अगर इस सौन्दर्य के साथ तुम्हारे अन्दर विवेक भी हो तो तुम्हारे साथ विवाह करने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है ।"

"तुम्हें मेरे विवेक के बारे में सन्देह करने की कोई आवश्यकता नहीं है ।" यह कह कर उसने टेलिमसस नगर के राजा की मृत्यु का समाचार सुनाया । फिर भक्तिन के भीतर प्रवेश हुई देवी और उसके सन्देश के बारे में बताकर बोली, "अगर मैं तुम्हारी गाड़ी पर सवार न हुई होती तो यह तो निश्चय ही है कि तुम्हारे राजा बनने की कोई संभावना नहीं हो सकती ।"

गोर्डियन ने स्वीकृति सूचक सिर हिलाया । तीसरे पहर तक बैलगाड़ी नगर में आ पहुँची । टेलिमसस के लोगों ने बैलगाड़ी, गाड़ी के कूबर पर गरुड़ पक्षी तथा गाड़ी पर बैठे युवक की बगल में एक युवती को देखकर जय-जयकार करना प्रारंभ कर दिया, "यही हमारे राजा और रानी हैं । हमारे राजा और रानी की जय हो !"

इस प्रकार गोर्डियन टेलिमसस का राजा बन गया । राजा बनते ही गोर्डियन ने अपनी क़िस्मत खोलनेवाले कूबर तथा जूए को मिलाकर एक विचित्र गाँठ लगायी और उन दोनों को भगवान को समर्पित कर मन्दिर में रखा । इसके बाद उसने लोगों से कहा, "इस गाँठ को खोलने वाला व्यक्ति सारे विश्व का सम्राट बनेगा ।"

गोर्डियन की उस गाँठ को खोलने का अनेक लागों ने प्रयत्न किया, पर कोई भी सफल न हुआ । विश्व-विजेता बनने का संकल्प करनेवाले सिकन्दर ने भी उस विचित्र गाँठ को खोलने का प्रयत्न किया, लेकिन असफल रहा । अपनी इस असफलता पर खीज कर उसने अपनी तलवार से उस गाँठ को काट डाला ।

पिशाचों का ज्योतिष

अम्बापुर गाँव में सांबशिव नाम का एक युवक रहता था। वह अपने घर के पिछवाड़े साग-सब्ज़ी उगाता और शहर ले जाकर उसे बेच देता। इस तरह उसका गुज़ारा आराम से हो जाता था।

एक दिन बाज़ार में उसे देर होगयी। अंधेरा अधिक न हो जाये, यह सोचकर सांबशिव तेज़ क़दमों से अपने गाँव की ओर लौट रहा था।

इतने में ही बादल घिर आये और बिजली कड़कने लगी। सांबशिव इस समय इमली के एक बाग से गुज़र रहा था कि ज़ोर की बारिश होने लगी। सांबशिव पगडंडी से लगे एक इमली के पेड़ के नीचे जा खड़ा हुआ।

वह आश्रय के लिए चारों तरफ़ नज़र दौड़ाने लगा। तभी उसने देखा कि एक जगह लपटें धक-धक कर जल रही हैं। उसे बड़ा आश्चर्य हुआ कि ऐसी भयानक बारिश में यह आग, ये लपटें कैसी? अचानक उसके मुँह से चीख निकल गयी। उन लपटों को घेर कर वहाँ तीन पिशाच बैठे हुए थे।

सांबशिव का चीत्कार सुनकर पिशाच उसकी ओर देखकर बोले, "यहाँ आकर बैठ जाओ, हम तुम्हारी कोई हानि नहीं करेंगे। तुम अम्बापुर के निवासी ही हो न? बता सकते हो, कल तुम्हारे गाँव में क्या होनेवाला है?"

पिशाचों के मुँह से यह सरल बातचीत सुनकर सांबशिव ने अपना साहस बटोरा और उनके निकट जाकर बोला, "मैं साग-सब्जी बेचकर अपना पेट भरता हूँ। मैं कैसे बतादूँ कि कल गाँव में क्या होनेवाला है? मैं ज्योतिष तो जानता नहीं।"

"अच्छा, ऐसी बात है! तब मैं तुम्हें बताता हूँ कि कल तुम्हारे गाँव में क्या होनेवाला है। सावधानी से सुनो!" यह कहकर एक पिशाच थोड़ा आगे आया और आग की एक लपट को निगलकर बोला, "तुम्हारे गाँव की पाठशाला से

यमुना वशिष्ठ

लगा हुआ एक नीम का पेड़ है न ? वह आंधी-बारिश के धक्के खाकर दायीं तरफ़ थोड़ा झुक गया है। कल वह पेड़ पाठशाला के भवन पर गिर जायेगा।" उस पिशाच ने कहा।

दूसरे पिशाच ने अग्निकुंड से अंजुलि भर अंगारे लिये, फिर उन्हें अपने सिर पर डालकर बोला, "शाम को भगवान की जो शोभा यात्रा निकलेगी, उस वक्त मन्दिर का हाथी पागल हो जायेगा।"

तीसरे पिशाच ने अपने मुँह से अग्निकुंड में लपटों को फूँककर कहा, "कल रात तुम्हारे गाँव के बड़े तालाब में दरार पड़ने वाली है।"

पिशाचों की ज्योतिष-वाणी सुनकर सांब-शिव को बड़ा विस्मय हुआ। तभी उसे पिशाचों के ठठाकर हँसने क ध्वनि सुनाई दी और देखते ही देखते वे अदृश्य हो गये।

बारिश के थमते ही सांबशिव वहाँ से चलकर गाँव पहुँचा। उसे सबसे पहले पिशाच की बात याद आगयी और वह पाठशाला के अध्यापक को इस विषय में चेतावनी देने के लिए उनके घर गाया। उसने सारा वृत्तान्त अध्यापक को सुनाया और बोला, "कृपया एक दिन के लिए पाठशाला बंद कर दीजिए !"

अध्यापक भी उस समय अपने किसी निजी काम को लेकर चिन्तित था। उसने सांबशिव की सलाह सहज ही मान ली।

पाठशाला का समय होते ही बच्चे आने लगे। अध्यापक ने छुट्टी की घोषणा की और वह बच्चों के साथ पाठशाला के अहाते से जैसे ही बाहर निकला, नीम का पेड़ कड़-कड़ ध्वनि करता हुआ पाठशाला पर गिर पड़ा।

कुछ ही क्षणों में पिशाचों से हुई सांबशिव की मुलाक़ात और पिशाचों की ज्योतिष-वाणी का समाचार सारे गाँव में फैल गया। गाँव के कुछ बुजुर्ग सांबशिव के पास पहुँचे और बोले, "बेटा, पिशाचों ने क्या कुछ और भी बताया था ?"

"हाँ, बताया था ! शाम को मन्दिर का हाथी पागल होनेवाला है। रात को हमारे गाँव के बड़े तालाब में दरार पड़ने वाली है।" सांबशिव ने कहा। इसके बाद मन्दिर के न्यासी महावत की मदद से हाथी को दूर ले गये और उसे जंजीरों

से एक पेड़ से बंधवा दिया। लेकिन, भगवान की शोभायात्रा के आरंभ होते ही हाथी जोर से चिंघाड़ा और जंजीरों को तोड़कर जंगल में भाग गया।

ख़तरा टल गया, यह देखकर गाँव के लोगों ने सांबशिव की बड़ी प्रशंसा की। अब तीसरी भविष्यवाणी का भय सामने था। कुछ लोगों ने हाथों में मशालें लीं और बड़े तालाब के पास पहुँचे। वे तालाब का पहरा देने लगे। आधीरात हुई तो बारिश का पानी नहरों से आकर तालाब में भर गया। पानी के धक्के से कमज़ोर बांध में दरार पड़ गयी। ग्रामवासियों ने मिट्टी और पत्थरों से तुरन्त उस दरार को भर दिया।

तीनों बातें पूरी होने के बाद ग्रामवासियों ने सांबशिव को घेर लिया और उस पर दबाव डालते हुए बोले, 'सांब, पिशाचों का ज्योतिष सचमुच सही निकला। आज रात होने पर तुम इमली के बाग में जाकर पता लगाना कि पिशाच और क्या कहते हैं!"

पूरा दिन गाँव वालों के बीच ही बीत गया। अंधेरा फैलते ही सांबशिव पिशाचों से मिलने चल पड़ा। सांबशिव को आते देख पिशाचों ने पूछा, "हे अम्बापुरवासी, क्या हमारा ज्योतिष सच निकला?"

"हाँ-हाँ पूरा सच निकला! तुम लोगों ने जो कुछ कहा, वही हुआ। कहीं पिशाचों का ज्योतिष झूठा हो सकता है? मैं तुम लोगों से यह जानने आया हूँ कि आज रात को क्या

होनेवाला है?" सांबशिव ने उनकी बात का उत्तर देकर अपना सवाल रख दिया।

एक पिशाच ने आग की लपट को पकड़ कर कहा, "कल ज़मींदार के घर डाका पड़ेगा, समझें।"

दूसरे ने अंगारे सिर पर डालकर कहा, "कल गाँव के मुखिया धनंजय की बेटी की शादी है। उस अवसर पर जो कढ़ी बनेगी उसमें छिपकली गिर जायेगी।"

इसके बाद पिशाच गायब हो गये।

सांबशिव ने गाँव लौट कर यह समाचार ज़मींदार तथा धनंजय को दिया। ज़मींदार ने अपने घर कड़ा पहरा बैठा दिया। मुखिया ने भी सावधानी बरती। इस तरह वे ख़तरों से बच

गये। दूसरे दिन सुबह ही सुबह ज़मींदार अपनी बग्घी में सांबशिव के घर आये और कहा, "सांब, इस बार तुम पिशाचों से यह जानकारी ले दो कि मेरे पुत्र कब होगा ? मैं तुम्हारी मेहनत का पूरा पारितोषिक दूँगा ।" यह कह कर ज़मींदार ने उसे अग्रिम राशि के रूप में एक थैली दी, जिसमें सोने की सौ मुद्राएं थीं ।

इसके बाद अम्बापुर का सेठ सांबशिव के पास पहुँचा और बोला, "सांब, तुम पिशाचों से कहना कि मेरे तथा मेरी पत्नी के पूर्वजों ने कई पीढ़ी पूर्व नौका-व्यापार करके करोड़ों रुपये कमाये थे । मेरी पत्नी मुझ पर रोज़ दबाव डालती है कि यह परचूनिये का धंधा छोड़कर मैं भी समुद्र पर नौका-व्यापार करूँ । क्या मैं इस नौका-व्यापार में सफल हो सकूँगा ?" इस सेठ ने भी सांबशिव के हाथों में सोने और चांदी का एक-एक सिक्का दिया और वहाँ से चला गया ।

सांबशिव के पास लोगों का तांता लगा रहा । सुबह से लेकर शाम तक ग्रामवासियों ने अपनी समस्याओं का हल जानने के लिए जो धन सांबशिव को दिया, उसका हिसाब लगाने पर सांबशिव की आँखें चकरा गयीं । शाम के समय उसके पास कुल मिलाकर, एक हज़ार सिक्के थे ।

सांबशिव ने सबके सवालों की सूची बनाकर उन्हें एक कागज़ पर लिखवा लिया । फिर उसने उस धन में से पाँच सौ सिक्के अलग बाँध लिये और पिशाचों से मिलने चल दिया ।

पिशाच उसे देखते ही हँस कर बोले, "हे अम्बापुर वासी, आओ, आजाओ !"

सांबशिव निर्भय होकर उनकी बगल में जाकर बैठ गया और बोला, "तुम लोग हमेशा उत्पातों की ही भविष्यवाणी करते हो, भविष्य में होनेवाले कुछ अच्छे कार्यों के बारे में भी बताओगे तो क्या सोने की वर्षा नहीं होगी ?" यह कह कर उसने पिशाचों को धन की गठरी दिखाई ।

इसके बाद उसने सारा हाल पिशाचों को सुनाया और ग्रामवासियों के सवालों की सूची का वह कागज़ भी उनके सामने रख दिया, फिर बोला, "तुम लोग इन सारे प्रश्नों का उत्तर देकर पाँच सौ सिक्के ले लो । अपने हिस्से के पाँच सौ सिक्के मैं ले चुका हूँ । एक दिन में इतनी

भारी कमाई । मैं साग-सब्जी उगाने के कड़ी मेहनत के काम को आज से तिलांजलि दे रहा हूँ और आप लोगों के सहारे से मज़े से धन कमाना चाहता हूँ ।"

सांबशिव की बातें सुनकर पिशाचों की आँखें क्रोध से लाल होगयीं । उन्होंने सवालों की सूची वाले उस कागज़ को अग्निकुंड में डाल दिया और डपट कर बोले, "अरे मूर्ख, तुम आगे कभी इस ओर मत आना । अगर आये भी तो हम तुम्हें दिखाई नहीं देंगे ।" यह कहकर वे पिशाच अदृश्य होगये ।

इस घटना से सांबशिव हक्का-बक्का रह गया । उसे धन की वह गठरी भी दिखाई नहीं दी । उसने एक छड़ी से अग्निकुंड को हिलाया, पर वे सिक्के उसे नहीं मिले । सुबह होते ही सबको उनका धन वापस करना है । उसकी समझ में नहीं आया कि क्या करे, वह दुख में डूब गया ।

सुबह होगयी । सांबशिव वैसे ही बैठा रहा । उस रास्ते से जारहे एक वृद्ध तीर्थयात्री ने सांबशिव को देखकर पूछा, "बेटा, बात क्या है ? तुम इस प्रकार चिंतामग्न क्यों बैठे हो ?"

सांबशिव ने उसे सारा समाचार कह सुनाया। सारी बात सुनकर वृद्ध यात्री बोला, "बेटा, पिशाचों ने तुम्हें मूर्ख बताया, यह सच बात है । तुम्हें इतना भी ज्ञान नहीं कि पिशाच धन लेकर क्या करेंगे ? उन्होंने जो दुष्ट कार्य किये, जिसके परिणाम-स्वरूप उन्हें पिशाच योनि प्राप्त हुई, तो अब वे प्रायश्चित के रूप में कुछ अच्छे कार्य करना चाहते थे । इसी भावना से उन्होंने तुम्हारे गाँव पर आनेवाली विपदाओं की सूचना दी । उनके इस उत्तम आशय को तुमने व्यापार का रूप देना चाहा । इसी कारण से वे रुष्ट होकर अदृश्य होगये हैं ।"

वृद्ध के उपदेश से सांबशिव को अपनी गलती का ज्ञान हुआ । उसने निश्चय किया कि चार-पाँच माह तक कड़ा परिश्रम करके वह ग्रामवासियों का ऋण चुका देगा । वह एक नये आत्म-विश्वास को लेकर अपने गाँव की ओर लौट पड़ा ।

सेनापति का चुनाव

गजपुर के सेनापति वीरमल्ल का अचानक देहावसान होगया । एक वीर, कुशल, स्वामीभक्त सेनापति के आकस्मिक निधन से राजा इंद्रसेन को बड़ा धक्का लगा । सेनापति के पद को अधिक समय रिक्त नहीं रखा जा सकता था, इसलिए राजा इंद्रसेन ने नया सेनापति नियुक्त करने के लिए सेना में से तीन व्यक्तियों को परीक्षा के लिए चुना । उन तीनों के नाम थे विक्रम, अजय और शूरसेन । राजा इस बात पर गंभीरता से विचार कर रहे थे कि सेनापति किसे बनाया जाये कि तभी इन्दुपुर का सेनापति अजीत सिंह राजा इंद्रसेन से मिलने आया ।

गजपुर और इन्दुपुर राज्यों में चिरकाल से मित्रता का सम्बन्ध रहा है । जैसे ही इन्दुपुर के राजा भरतसिंह को यह सूचना मिली कि पड़ोसी देश वीरमपुर उनके देशों पर हमला करने की तैयारियां कर रहा है, वैसे ही उन्होंने अपने सेनापति अजीतसिंह को राजा इंद्रसेन को पूरा समाचार देने के लिए भेजा ।

सेनापति अजीतसिंह ने राजा इंद्रसेन को वीरमपुर की गुप्त रूप से हो रही युद्ध की तैयारियों का परिचय दिया और कहा, "महाराज, यें सारे समाचार हमारे अत्यन्त समर्थ गुप्तचरों ने दिये हैं । महाराजा भरतसिंह का कहना है कि हमें अत्यन्त सावधान रहना चाहिए । जब हम लोगों के सम्मुख विपदा थी, तब आपके इतने योग्य एवं शक्तिशाली सेनापति वीरमल्ल का देहावसान होगया । यह बड़े दुर्भाग्य की बात है ।"

"सेनापति अजीतसिंह, आपका कहना बिलकुल सही है । मैं इस पद पर उतने ही समर्थ व्यक्ति को नियुक्त करना चाहता हूँ । संयोग से आप इस समय यहाँ उपस्थित हैं । मेरे सामने तीन योग्य व्यक्ति हैं— शूरसेन, अजय और विक्रम । मैं किसी परीक्षा के द्वारा इनमें से एक का चुनाव करना चाहता हूँ । इस दिशा में

सावित्री निगम

मुझे आपका सहयोग चाहिए। क्या आप कुछ निश्चित कर सकते हैं ?''

अजीतसिंह ने राजा इंद्रसेन को आश्वासन देते हुए कहा, ''महाराज, आप बिलकुल निश्चिंत रहें। कल मैं इन तीनों की अलग-अलग परीक्षा लूँगा।''

दूसरे दिन राजा इंद्रसेन और सेनापति अजीत सिंह एक कक्ष में आसीन हुए। सबसे पहले शूरसेन को बुलवाया गया। शूरसेन से अजीत सिंह ने पूछा, ''हमें गुप्त सूचना मिली है कि हमारे कुछ पड़ोसी राजा हम पर आक्रमण करने की तैयारियां कर रहे हैं। क्या तुम बता सकते हो, उनका सैनिक-बल कितना है ?''

शूरसेन ने तत्काल अमुक-अमुक राजाओं के हाथी एवं घोड़ों की संख्या, पैदल और सेना के विभिन्न दलों के द्वारा प्रयुक्त किये जानेवाले आयुधों का विवरण दे दिया।

शूरसेन के उत्तर से सन्तुष्ट होकर अजीतसिंह ने पुनः पूछा, ''अब तुम यह बताओ कि गजपुर की सैनिक शक्ति कितनी है ?''

शूरसेन ने बिना किसी संकोच के अपने राज्य के विविध सैनिक-बल और आयुधों का पूरा परिचय दे दिया। उसने यह भी बताया कि कितना सैनिक-बल राज्य के किस सीमा-भाग पर तैनात है।

अजीतसिंह ने उसे विदा करके अजय को बुलवाया और उसके सामने भी वही सवाल रखे जो शूरसेन के सामने रखे थे।

अजय ने भी शूरसेन की भाँति तत्काल उत्तर दिया और पड़ोसी देशों के सैनिक-बल और

आयुध-बल का बयान करके अपने राज्य के सैनिक-आयुध-बल के बारे में भी पूरी जानकारी दी ।

अजय के जाने के बाद विक्रम को बुलवाया गया । अजीत सिंह ने विक्रम के सामने भी वही सवाल रखे जो शूरसेन एवं अजय के सामने रखे थे । विक्रम ने पड़ोसी देशों के सैनिक बल का पूरा विवरण प्रस्तुत किया, लेकिन अपने राज्य के सैनिक-बल के बारे में मौन धारण कर लिया । कुछ दबाव डालने पर उसने इतना ही कहा कि वह इस विषय में अधिक नहीं जानता।

विक्रम के चले जाने के बाद सेनापति अजीतसिंह ने राजा इंद्रसेन से कहा, "महाराज, विक्रम ही आपके सेनापति-पद के योग्य है ।"

अजीतसिंह के इस निर्णय पर राजा इंद्रसेन को बड़ा आश्चर्य हुआ । उन्होंने पूछा, "सेनापति, जो व्यक्ति अपने देश के सैनिक-बल की जानकारी नहीं रखता, क्या ऐसे व्यक्ति को प्रधान सेनापति का पद देना उचित होगा ?"

"महाराज, विक्रम अपने राज्य के सैनिक-बल की संपूर्ण जानकारी रखता है, लेकिन उसने यह बात मेरे सामने गुप्त रखी है । उसने ऐसा क्यों किया, यह आप उससे अलग से पूछेंगे तो आपको सब स्पष्ट हो जायेगा ।" अजीतसिंह ने कहा ।

अजीतसिंह इन्दुपुर लौट गया, तब राजा इंद्रसेन ने विक्रम को बुलाया और पूछा, "क्या तुम्हें हमारे राज्य के सैनिक-बल की कोई जानकारी नहीं है ?"

विक्रम ने अत्यन्त विनम्र होकर उत्तर दिया, "महाराज, हमारे देश और इन्दुपुर में इस समय भले ही कितनी भी प्रगाढ़ मित्रता क्यों न हो, पर भविष्य के परिवर्तनों के बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता । मेरा अपना विचार यह है कि पड़ोसी देश के सेनापति को अपने सैनिक-बल की जानकारी देना ज़रा भी उचित नहीं है ।"

विक्रम का समुचित उत्तर सुनकर राजा इंद्रसेन अत्यन्त प्रसन्न हुए और उन्होंने उसी समय विक्रम को अपना सेनापति नियुक्त करके आदेश ज़ारी किया ।

बुद्धिमान पुत्र

चंद्रपुर गाँव में मोहनदास नाम का एक किसान रहता था। उसके किशन नाम का एक ही लड़का था। मोहनदास ने अपने बेटे को बड़े लाड़-प्यार से पालकर बड़ा किया था। उसका विश्वास था कि एक दिन उसका बेटा एक समर्थ और समझदार आदमी निकलेगा। किशन के मन में भी यह पक्का विश्वास था कि वह एक न एक दिन बहुत बुद्धिमान बनेगा। उसके अन्दर अपनी बुद्धिमत्ता के प्रति ज्यों-ज्यों विश्वास बढ़ता गया, मोहनदास के अन्दर पुत्र के प्रति विश्वास घटता गया। कुछ दिन ऐसे ही निकल गये।

एक दिन मोहनदास ने अपने पुत्र से कहा, "किशन, तुम अब बीस साल के होगये हो, पर तुम मेरी किसी भी तरह की मदद नहीं करते। मैं जब तुम्हारे बारे में सोचता हूँ तो मुझे ऐसा लगता है कि दिन पर दिन तुम्हारी बुद्धि मन्द होती जा रही है।"

"पिताजी, अगर मेरी बुद्धि मन्द है तो बताइये, बुद्धिमान कौन है ? आप बतायें, मैं क्या करूँ ? अपनी समझदारी का परिचय कैसे दूँ ?" किशन ने पूछा।

"देखो बेटा, हमारे घर में भेड़ का चमड़ा है। उसे तुम हाट में बेच आओ !" मोहनदास ने कहा।

"ठीक है, मैं अभी चमड़ा बेचकर रुपया लाता हूँ।" किशन ने बड़े आत्मविश्वास से उत्तर दिया।

"अरे बेटा, चमड़ा बेचकर तो सभी धन ला सकते हैं, इसमें बुद्धिमानी की बात क्या है ? तुम अगर सचमुच समझदार हो तो चमड़ा और उसका मूल्य दोनों लेकर आओ।" मोहनदास ने कहा।

किशन ने बिना कुछ सोचे-समझे झट से उत्तर दिया, "ठीक है, मैं ऐसा ही करूँगा ! आप देखते रहिये, कल शाम तक मैं भेड़ का

२५ वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित एक कहानी

चमड़ा और उसका मूल्य दोनों ले आऊँगा।"

दूसरे दिन सवेरे ही किशन ने भेड़ का चमड़ा लपेट कर बगल में दबा लिया और हाट की ओर चल पड़ा। अभी उसने हाट में क़दम रखा ही था कि एक व्यक्ति सामने आया और उससे बोला, "सुनो भाई, भेड़ का यह चमड़ा कितने में बेचना चाहते हो ?"

"मेरी शर्त एक ही है, चमड़ा बेचने पर भी मुझे चमड़ा और उसका मूल्य दोनों चाहिए।" किशन ने जवाब दिया।

उसकी बात सुनकर ग्राहक खिलखिलाकर हँस पड़ा और बोला, "वाह, विचार तो तुम्हारा बहुत बढ़िया है। आज तक ऐसी बात तो किसी के दिमाग़ में भी नहीं आयी होगी। बड़े बुद्धिमान हो ! अवश्य ही तुम्हें कोई ऐसा ग्राहक मिल जायेगा जो चमड़ा लिये बिना उसका दाम दे देगा।" यह कह कर वह अपने रास्ते चला गया।

हाट में और कई लोगों ने किशन से भेड़ का दाम पूछा। सबको उसने वही उत्तर दिया। सब उसकी बात पर हँसते और अपने रास्ते चले जाते।

दिन ढलने लगा। किशन जो चमड़ा लाया था, वह अब भी उसकी बगल में था। हाट में घूम-घूमकर उसके पैर दुखने लगे थे। तभी उसकी निगाह एक जगह एकत्रित हुई भीड़ पर पड़ी।

उस भीड़ के बीच एक जादूगर अपना जादू दिखा रहा था। किशन के हाथ में चमड़ा देखकर वह बोला, "अरे भैया, यह चमड़ा थोड़ी देर के लिए मुझे दे दो। मैं तुम्हें एक बढ़िया जादू दिखाऊँगा।"

किशन ने चमड़ा जादूगर को दे दिया। जादूगर ने चमड़े के पुलिन्दे को ज़मीन पर खड़ा किया और उस पर अपना अंगोछा ढंक दिया। तब वह सबसे बोला, "अब आप तालियाँ बजाइये।" सबने तालियाँ बजायीं। जादूगर ने चमड़े के ऊपर का अंगोछा हटाया तो उसके नीचे आम का एक छोटा सा पेड़ निकला। पेड़ पर एक आम लटक रहा था।

किशन उस दृश्य को देखकर कुछ क्षण स्तब्ध खड़ा रह गया। जब उसे होश आया तो

उसने जादूगर से अपना चमड़ा वापस लेना चाहा, लेकिन इस बीच जादूगर वहाँ से गायब हो गया था ।

किशन की आँखों में पानी भर आया । उसे तो चमड़ा और उसका मूल्य घर जाकर पिता को देना था, पर मूल्य तो दूर, चमड़ा भी ग़ायब होगया । खाली हाथ घर लौटने पर यह साबित हो जायेगा कि वह सचमुच ही मन्दबुद्धि है ।

मन में चिंता तो थी ही, उसे भूख भी सताने लगी । सामने आम के पौधे पर एक आम लटक रहा था । उसने सोचा कि कम से कम एक आम खाकर अपनी भूख तो शांत कर ले । इस विचार से वह आगे बढ़ा और जैसे ही उसने आम को छुआ, आम का वह नन्हा पेड़ गायब होगया और उसकी जगह भेड़ का चमड़ा रखा दिखाई दिया ।

उसने लपक कर भेड़ का चमड़ा उठाया और उसे बगल में दाबकर चंद्रपुर गाँव की ओर चल पड़ा ।

सूर्यास्त का समय था । रास्ता सुनसान था । किशन अभी कुछ ही दूर आगे बढ़ा था कि पीछे से उसे किसी ने ज़ोर से पुकारा । मुड़कर देखा तो जादूगर चला आ रहा था ।

जादूगर किशन के साथ-साथ चलने लगा । कुछ देर मौन रह कर वह बोला, "मैं तुम्हें एक सलाह देना चाहता हूँ, तुम इसे कभी मत भूलना !"

"कैसी सलाह ?" किशन ने पूछा ।

"देखो, अगर रास्ते में तुम्हें कोई स्त्री मिले तो उसका कुशल-प्रश्न पूछना !" जादूगर ने कहा ।

थोड़ी दूर जाने के बाद जादूगर अलग रास्ते पर मुड़ गया । किशन अपने रास्ते आगे बढ़ा ।

किशन कुछ आगे जाने के बाद एक नहर के पास पहुँचा । उस नहर के पास एक मकान था । उस मकान से एक सोलह वर्ष की लड़की निकली और नहर के पास जाकर कलश में पानी भरने लगी । तभी किशन को जादूगर की सलाह याद आयी । उसने आगे बढ़कर उस लड़की से पूछा, "तुम्हारे घर में सब कुशल तो हैं ?"

"हाँ, सब कुशल हैं !" लड़की ने कहा ।

फिर बातचीत होने लगी। उसका नाम राधा था। वह समझ गयी कि किशन नाम के इस राहगीर ने आज सुबह से कुछ खाया-पिया नहीं है। वह किशन को अपने घर ले गयी और उसे ज्वार की रोटियाँ खाने को दीं। इसके बाद राधा ने किशन के हाथ के भेड़ के चमड़े के बारे में पूछा।

"मेरे पिताजी ने कहा है कि मैं चमड़े को बेच दूँ, फिर भी चमड़ा और उसका मूल्य दोनों लेकर घर लौटूँ। पर मैं ऐसा कर नहीं पाया।" किशन ने बताया।

"बस, इतनी सी बात है ? तुम ठहरो, मैं तुम्हें चमड़ा और चमड़े का दाम दोनों दूँगी।" यह कह कर राधा ने किशन के हाथों से भेड़ का चमड़ा ले लिया। उसने चमड़े के ऊपर के रोंयों को काटकर चमड़ा तथा रोंयों का दाम किशन को दे दिया।

किशन बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने राधा से विदा ली और घर पहुँचा।

बेटा चमड़ा भी लाया था और दाम भी, यह देखकर मोहनदास अत्यन्त प्रसन्न हुआ। उसने पूछा, "बेटा किशन, यह उपाय तुम्हें किसने बताया ?"

"राधा नाम की एक लड़की ने बताया है।" यह कहकर किशन ने सारा किस्सा अपने पिता को सुना दिया।

"बेटा, क्या यही तुम्हारी बुद्धिमानी है ? ऐसी लड़की के मिलने पर तो उससे विवाह कर लेना चाहिए था। इसीलिए तो मैं तुम्हें हमेशा निरा बुद्धू कहता हूँ।" मोहनदास बोला।

किशन उसी वक्त घर से चल पड़ा। नहर के पास पहुँचा तो राधा उसे वहीं मिल गयी। किशन ने पूछा, "राधा, क्या तुम मेरे साथ शादी करोगी ?"

राधा हँस पड़ी और 'हाँ' कह कर किशन के साथ उसके पिता मोहनदास किसान के घर चली आयी।

मोहनदास ने बड़ी शान-शौक़त से अपने इकलौते बेटे किशन का विवाह राधा से कर दिया।

पक्षी और जानवर

अमरीका के नौका शोध-संस्थान ने सन् १९७६ में एक विचित्र शार्क मछली का पता लगाया है। इस मछली के मुँह में सुइयों जैसे दाँतों की सात पंक्तियाँ हैं। इसकी लम्बाई ४.४२ मीटर है और इसका वज़न ७४८ किलोग्राम है। इस मछली को मेगा माउथ शार्क (विशाल मुँहवाली शार्क) पुकारा जाने लगा है।
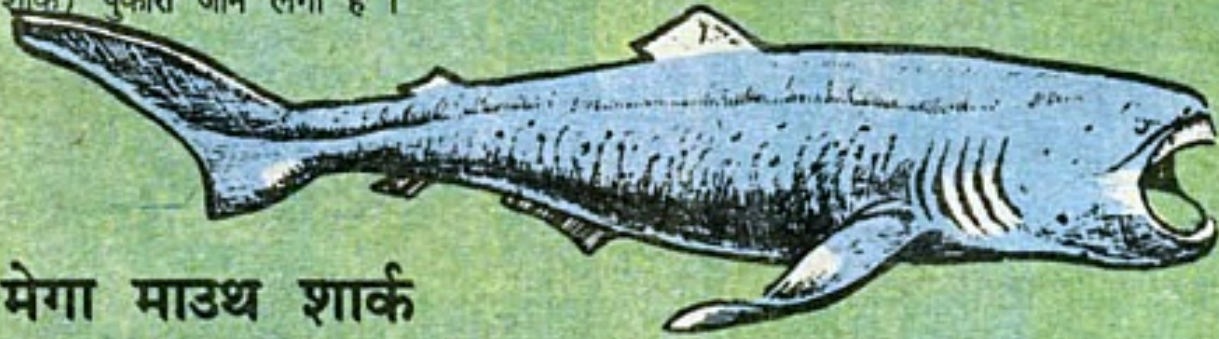
मेगा माउथ शार्क

उल्लू के कान

उल्लुओं की एक जाति ऐसी है जिसके सिर पर कान हैं। वास्तव में ये कान जैसे दिखते हैं, कान नहीं हैं। वे उसके पंख हैं। इन उल्लुओं के वास्तविक कान सिर के दोनों तरफ़ पंखों के अन्दर छिपे रहते हैं।

विश्व का सबसे छोटा चमगादड़ थायलैंड में है। इसके पंख १०० मि॰ मीटर लम्बे हैं और इसका शरीर ३.३ मि॰ मीटर लम्बा है।

नन्हा चमगादड़

"कितने दिन दाँतों के वो अनदेखे भक्षक मेरे दाँतों में खराबी फैलाने की ताक में बैठे रहे !
हाँ, मेरी माँ ने मुझे समझाया था. असल में वो 'बैक्टीरिया' हैं जो भोजन-कणों में मिलकर 'एसिड' बनाते हैं. और 'दाँतों के एनैमल' पर हमला करते हैं. फिर उसमें बारीक-बारीक छेद करके दर्दभरी दाँतों की सड़न पैदा करते हैं.
पर मुझे पता था मैं तो सुरक्षित हूँ.
सच ! मेरे साथ था...
मेरा सुपर फाइटर !
फोरहॅन्स फ्लोराइड
दाँतों की सड़न से
मेरी रक्षा-सुरक्षा यही करता है.
FOAMING
Forhan's
FLUORIDE
The toothpaste that tightens gums, fights cavities
मेरे सुपरफाइटर का फ्लोराइड 'दाँतों के एनैमल' को सख्त बनाता है. ताकि उनमें 'बैक्टीरिया' जमा न हो सकें. और दाँतों की सड़न पैदा न कर सकें.
मेरी माँ कितनी अच्छी है ! मेरे स्वादवाले, झागवाले सुपरफाइटर के बारे में मुझे सब कुछ सिखा दिया !"
एक नये आकर्षक पैक में
FOAMING
Forhan's
FLUORIDE
फोरहॅन्स फ्लोराइड
सुपरफाइटर— मुकाबला करे जमके-दाँतों की सड़न से.
4269-GM-203 HIN

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०

पुरस्कृत परिचयोक्तियां सितम्बर १९८६ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी ।

K. P. A. Swamy

A. L. Syed

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ जुलाई १० तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

मई के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो: मुझे भी सिद्धि प्राप्त होगी!

द्वितीय फोटो: माँ, मैंने मिट्टी नहीं खाई!!

प्रेषक: शिवचरण सिंह, ए/३५५, डबल स्टोरी, कालकांजी, दिल्ली - ११००१९.

'क्या आप जानते हैं ?' के उत्तर

१. सीरिया की राजधानी दमास्कस २. सेंट पीटर्स बर्ग ३. क्रिस्तानिया ४. मेलबोर्न ५. अल-खहि राह

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.
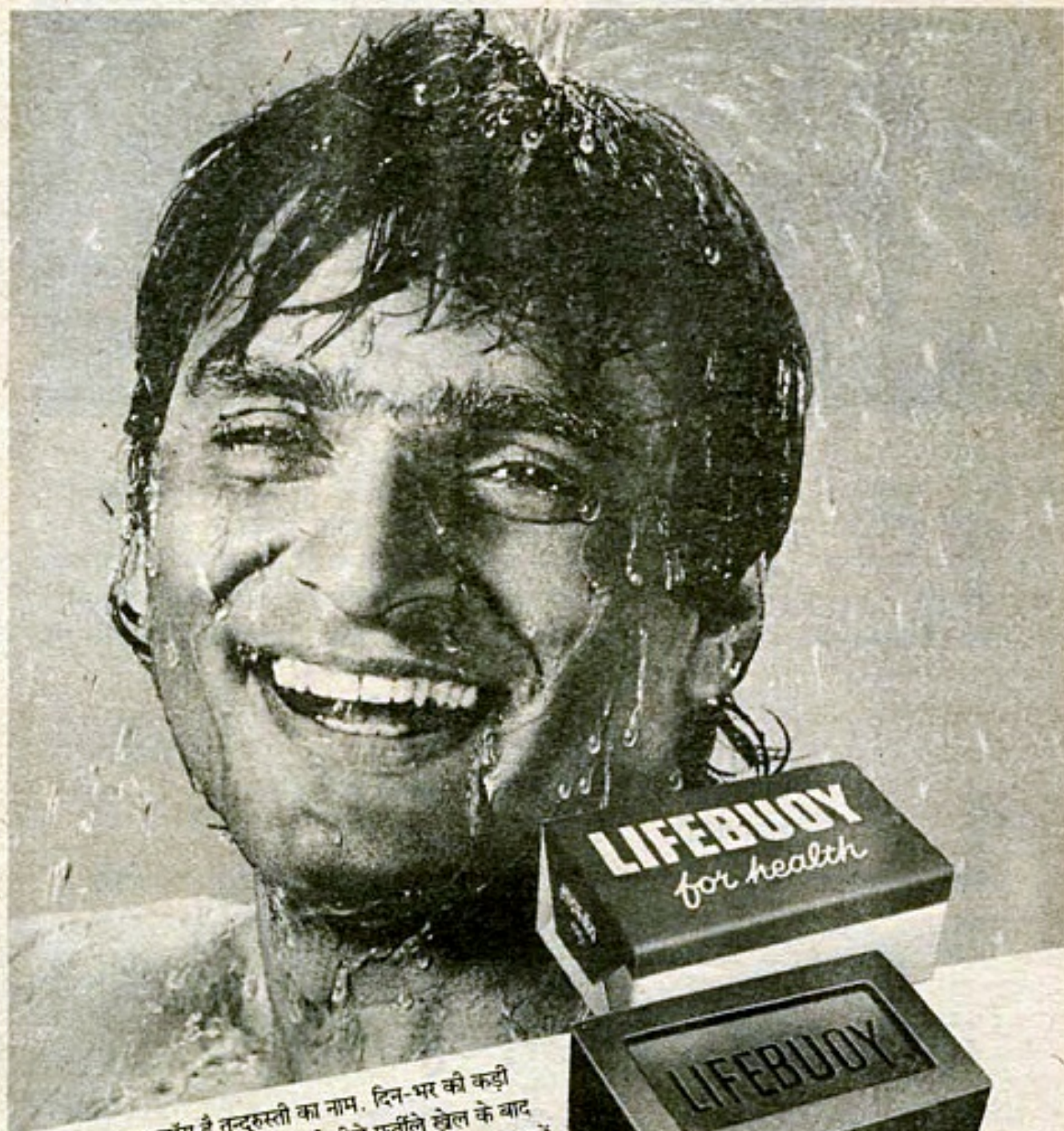
लाइफ़बॉय है जहां
तन्दुरुस्ती है वहां
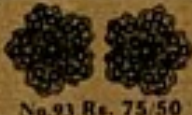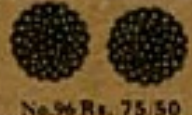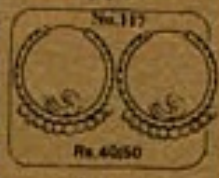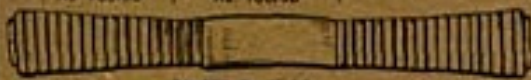
‘मेरी’

22 कैरट् स्वर्ण-आवृत जेवरों की चातुरी में है वीश्व नामी उत्तमता की प्रकृति। चमकीला सुन्दरी। सब की मन पसन्द, बेजाड़ रंगरूप में गारंटी जेवरों। मंगवाते वक्त जेवरों की संक्षा सूचीत करे। वी.पी.पी. खर्च अलग। मुफ्त केटलाग के लिए लिखे।

MERI GOLD COVERING WORKS

P.O. BOX: 1405, 14, RANGANATHAN STREET,
T. NAGAR, MADRAS-600 017, INDIA.

नटराज की लिखाई मैदान मार लाई

"नटराज से लिखने का मज़ा ही कुछ और है." यही है नटराज के चाहने वालों के दिल की बात. और क्यों न हो - नटराज लिखती ही इतनी बढ़िया है. गहरी, महीन साफ लिखाई, न रुके, न टूटे. लिखाई में तो नटराज हर पेंसिल से आगे है.

नटराज पेंसिल

लिखने से न थके फिर भी ज़्यादा टिके.

...ष्ट उत्पादन के निर्माता

...ान पेंसिल प्रा. लि., बम्बई-४०० ००१